लोमड़ी और जमीत

बच्चों द्वारा लिखी कहानियों का संकलन

एकलव्य

हेमलता विश्वकर्मा, सातवीं, शोभापुर, पिपरिया, *चकमक* जनवरी, 87 में प्रकाशित

लोमड़ी और जमीन

चकमक (जुलाई, 85 से दिसम्बर, 88) में प्रकाशित, बच्चों द्वारा लिखी कहानियों का संकलन

एकलव्य

लोमड़ी और जमीन

LOMDI AUR JAMEEN

चकमक में प्रकाशित बच्चों द्वारा लिखी कहानियों का संकलन

© एकलव्य
पहला संस्करण: जून 1989 (3000 प्रतियाँ)
24,000 प्रतियाँ प्रकाशित व वितरित
नौवाँ पुनर्मुद्रण: मई 2017 (3000 प्रतियाँ)
दसवाँ पुनर्मुद्रण: फरवरी 2018 (3000 प्रतियाँ)
ग्यारहवाँ पुनर्मुद्रण: अगस्त 2021 (3000 प्रतियाँ)
बारहवाँ पुनर्मुद्रण: सितम्बर 2023 (3000 प्रतियाँ)
कागज़: 80 gsm मैपलिथो व 220 gsm पेपर बोर्ड (कवर)
ISBN: 978-81-87171-07-2
मूल्य: ₹ 45.00

प्रकाशक: **एकलव्य फाउंडेशन**
जमनालाल बजाज परिसर
जाटखेड़ी, भोपाल - 462 026 (मप्र)
फोन: +91 755 297 7770-71-72
www.eklavya.in / books@eklavya.in

मुद्रक: बॉक्स कॉरोगेटर्स एंड ऑफसेट प्रिंटर्स, भोपाल; फोन: +91 755 258 7551

आवरण: वैभव बंसल, चौथी, खरगौन, मप्र। *चकमक*, मई, 87 में प्रकाशित।
पिछला आवरण: जुल्फकार मंसूरी, छठवीं, खापरखेड़ा, होशंगाबाद, मप्र।

बड़ों की एक बात

यह बात तो अब तक खूब दोहराई गई है कि देश में, खासकर हिन्दी क्षेत्र में बाल साहित्य की दशा बहुत खराब है। सवाल है इस स्थिति में बदलाव कैसे लाया जाए? एक तरफ टेलीविज़न व कॉमिक्स ने बाज़ार गरम कर रखा है। दूसरी ओर विदेश के निम्नस्तरीय खिलौनों, किताबों व रचनाओं की नकलें भरी पड़ी हैं। इसका यह मतलब कतई नहीं है कि विदेशों में बच्चों के लिए केवल निम्नस्तरीय साहित्य व चीज़ें ही रची जाती हैं। वास्तव में वहाँ बहुत कुछ ऐसा भी है जिसे सही ढंग से अपने यहाँ इस्तेमाल किया जा सकता है। लेकिन देखने में यही आता है कि बार्बी गुड़िया, हीमैन, सुपरमेन व बैटमेन जैसी चीज़ों की नकल ही व्यापक रूप से होती है।

ज़रूरत इस बात की है कि बच्चे को अच्छा साहित्य और खेल सामग्री मिले। एकलव्य पिछले कई सालों से इस कमी को पूरा करने की कोशिश कर रहा है। खिलौनों और बालोपयोगी साहित्य के माध्यम से हम बच्चों की रचनात्मक अभिव्यक्ति को मौका देने का प्रयास कर रहे हैं। *चकमक* मासिक पत्रिका के माध्यम से भी एकलव्य बच्चों में रचनात्मकता विकसित करने के लिए प्रयासरत है।

आम तौर पर तो बड़े ही बच्चों के लिए लिखते हैं लेकिन *चकमक*, *बालचिरैया* और *बाल कलम* में प्रकाशित होने वाली बच्चों की रचनाएँ हर मायने में उनसे इक्कीस ही हैं। इन्हीं रचनाओं से हमने पिछले कुछ सालों से संकलन तैयार करना शुरू किया है। मुख्यत: कविताओं और कहानियों के संकलन अभी तक हमने प्रकाशित किए हैं। आम तौर पर इन संकलनों में चित्र भी बच्चों के बनाए हुए ही हैं। हम मानते हैं कि देश के हर बच्चे की अपनी एक विशिष्ट अभिव्यक्ति है, शैली है – चाहे वह गाँव में रहता हो या फिर कस्बे या शहर में। अगर मौका दिया जाए तो यह स्वाभाविक रूप से अपनी भाषा या तरीके से उभर आएगी। उदाहरण के लिए इस संकलन की बस्तर के फूलसिंह ठाकुर की कहानी "लोमड़ी और जमीन" ही लें। जिस प्रकार की कल्पनाशक्ति इस कहानी से उभरती है उसमें गैब्रियल गारसिया

मार्क्वेज़ (नोबल पुरस्कार प्राप्त लातिन अमरीकी उपन्यासकार) की झलक मिलती है। लेकिन फूलसिंह जैसे लोगों की यह सृजनात्मकता व्यापक रूप से क्यों नहीं देखने में आती? स्कूली भाषा, भय, बड़ों की डाँट-डपट व गलत-सही का सिलसिला जब तक हावी रहेगा, यह नन्ही अभिव्यक्ति मरती रहेगी और इसकी जगह लेगी एक विकृत संस्कृति जो न उस बच्चे की है, न उस परिवेश की। और इसमें से उभरेगा एक नीरस व उजड्ड व्यस्क जिसको हम अन्ततः मिसगाइडेड यूथ या भटके हुए युवा का नाम देकर धिक्कारते हैं।

इन संकलनों की सभी रचनाएँ *चकमक* में जुलाई, 1985 से दिसम्बर, 1988 के बीच समय-समय पर प्रकाशित हुई हैं। इनमें से कई रचनाएँ किशोर भारती के भगतसिंह पुस्तकालय व सांस्कृतिक केन्द्र की बाल सभा व अन्य गतिविधियों में तैयार की गईं और फिर *चकमक* में छापी गईं। रचनाकार के नाम के साथ उनकी उम्र या कक्षा का उल्लेख है। यह उम्र या कक्षा रचना लिखते समय या चित्र बनाते समय की है।

वर्तमान शिक्षा पद्धति की एक देन नकल है। और यह केवल परीक्षा या स्कूल तक ही सीमित नहीं रहती, बल्कि स्कूल के बाहर की ज़िन्दगी में भी उभरने लगती है। *चकमक* के लिए आने वाली रचनाओं में भी कभी-कभी नकल की हुई कविताएँ या कहानियाँ आ जाती हैं। इस संकलन में शामिल रचनाएँ मौलिक हों, यह प्रयास हमने किया है।

एकलव्य

जून, 1989

खाकरी का पत्ता

सागरमल विश्वकर्मा

एक आदमी बाज़ार जा रहा था। जाते समय रास्ते में एक खाकरी का पौधा मिला, उसने उसमें से एक पत्ता तोड़ लिया और दो पत्तों को छोड़ दिया। उसने उस पत्ता को एक जगह स्थिर रखकर अपने घर चला गया। जब वह दूसरे दिन आया तो उसने देखा कि वह पत्ता सूख गया है तो वह दौड़ता हुआ उसी पौधे के पास पहुँचा। जो वे दो पत्ते थे वे नीचे झुकने लगे तो वह उसी पत्ता के पास जाकर रोने लगा और कहने लगा कि मैंने इस पत्ते को मार दिया।

सागरमल विश्वकर्मा, चांसिया, देवास, मप्र।
जनगढ़सिंह श्याम, मण्डला, मप्र। कहानी व चित्र *चकमक* जनवरी, 87 में प्रकाशित।

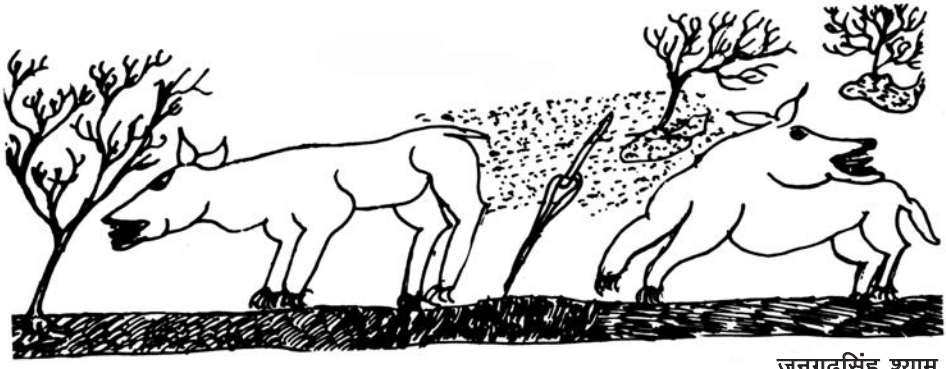

जनगढ़सिंह श्याम

लोमड़ी और जमीन

फूलसिंह ठाकुर

एक समय की बात है। उस समय जानवरों का अकाल पड़ा था। तब एक लोमड़ी एक जंगल में रहता था। उसको आठ दिन तक खाने को ना मिला। तब लोमड़ी ढूँढते-ढूँढते एक जंगल में घुस गया। तब उसे जंगल में एक सेंटीमीटर गाय की हड्डी मिली तो लोमड़ी बहुत खुश हुआ। और हड्डी के इस पार से उस पार कूद-कूद कह रहा है, कितने पैसे का ये हड्डी है?

बोल-बोलकर वह थक गया पर वहाँ कोई नहीं रहे तो किससे बताता। तब जमीन सुन-सुनकर थक गई और बोली, एक पैसा देके खाओ। फिर उतना ही सुनकर लोमड़ी जल्दी-जल्दी खाने लगा। और खतम किया और भागने लगा। कम से कम एक किलोमीटर भागकर सुस्ताने लगा। तब जमीन तो वहीं हैं। उसने नहीं सोचा और बैठ गया। फिर जमीन बोली, ऐ लोमड़ी मुझे एक पैसा देना। लोमड़ी ने सोचा यहाँ पर भी जमीन आ गई। वह फिर भागा। एक-दो किलोमीटर जाकर बोला यहाँ पर भी जमीन पैसा माँगने आएगी। वहाँ पर आराम करने लगा। तब फिर जमीन बोली, देना मुझे एक पैसा। लोमड़ी यह सुनकर फिर भागा। एक

फूलसिंह ठाकुर, नवमीं, छिंदगढ़, बस्तर, मप्र।

जनगढ़सिंह श्याम, मण्डला, मप्र। कहानी व चित्र *चकमक* जनवरी, 87 में प्रकाशित।

किलोमीटर जाने पर बोला कि यहाँ भी जमीन पैसा माँगने आएगी। तब जमीन फिर बोली, देना एक पैसा।

ऐसा करते-करते लोमड़ी भाग रहा था कि काँटा के झाड़ में घुस गया। तब एक काँटा उसके आँख में गड़ गया। और लोमड़ी रोने लगा। तब जमीन फिर बोली, देना मेरा पैसा।

उसकी आवाज़ सुनकर लोमड़ी गुस्सा होकर बताई, क्यों तुम एक आँख वाले को भोजन दी रही कि दो आँख वाले को दी रही। जमीन बोली, दो आँख वाले को। तब लोमड़ी बताई की मेरा तो एक आँख है। जमीन चुप हो गई। इसलिए लोमड़ी चालाक होती है।

जनगढ़सिंह श्याम

नदिया में आया पूर

हीरालाल अहिरवार

एक बार हमारे गाँव की नदिया का पूर आया था जी। कि जब बारिश में करीब आठ दिन बरसा हुई थी। हुजूर आपको तो मालूम ही होगा कि भौत करी बरसा हुई थी तो हमारी नदिया आ गई तो का करें कि हमारे गाँव के मोड़ा-मोड़ी सब चले गए। जैसे के बरात आगे में जात हैं। तो भैय्या लाइन लगी के ओ भैया रे ये जा नदिया तो देखो कम से कम पचास-साठ आदमी मोड़ा-मोड़ी जुड़ गए।

तो भैयाजी का भव कि नदिया चड़त-चड़त सौसर हो गई क्योंकि बरसा अच्छी भई थी। असल में ज़ोरदार तो हमरे गाँव के पटेल लोग दूध बेचने

हीरालाल अहिरवार, सातवीं, रानी पिपरिया, होशंगाबाद, मप्र।
जनगढ़सिंह श्याम, मण्डला, मप्र। कहानी व चित्र *चकमक* जनवरी, 87 में प्रकाशित।

जाते थे। तो दो आदमी डिब्बा लेकर घुसने लगे और जाते-जाते गलक में पड़ गए और फिर भईं गप्प-गप्प करने लगे इतने में दो लोग और इकट्ठे हो गए तो वे जल्दी भगे। भगते-भगते कूद पड़े। वे चिल्लाकर बोले - हाय बचाओ, हाय बचाओ। दो लोग एक-दूसरे से कहते - ओ भैया अपन नदिया में ने कूदहें बे। उनके दूध के डिब्बा गिर गए और वे बराजोरी बचे भैया। वा दिन से हमरी नदिया में कोई आदमी नहीं कूदे।

हजूर, तो ऐसी हमारी नदिया का पूर है, हमारे काका को एक सागौन का बड़ा मोटा डूंडा मिला। उन्होंने सात आदमियों से उसे घर लाए और फिर पतरी लकड़ी पकड़ी। जो अभी हम लोग जलाते हैं। और डूंडा के हमने दरवाजे बनवाए हैं तो वे दरवाजे हमारे मकान में लगे हैं। जो अगर नदिया में लकड़ी आ जाए तो हमारे गाँव वाले लोग पकड़ते हैं। एक बार मैं खुद गया था तो मेरी कसम मैने डंगरा-कलींदे पकड़े थे और बहुत सारे लोगों ने भी पकड़े।

आपने भी पूर देखा होगा जी। एक बार नदिया आई तो एक आदमी कूद पड़ा तो बह गया और बहते-बहते चिल्लाया - भैया रे मोहे पकड़ों मैंने कई मैं तोसे कै थी का कूद जा, तू तो लकड़ी पकड़ रहो थो। मैं कई मत कूदे। तू तो कूद पड़ो लकड़ी काजे, न तेरी लकड़ी पकड़ानी और हम न होते तो तू मर जातो। हमारी नदिया का पूर भौत ज़्यादा आता है जी।

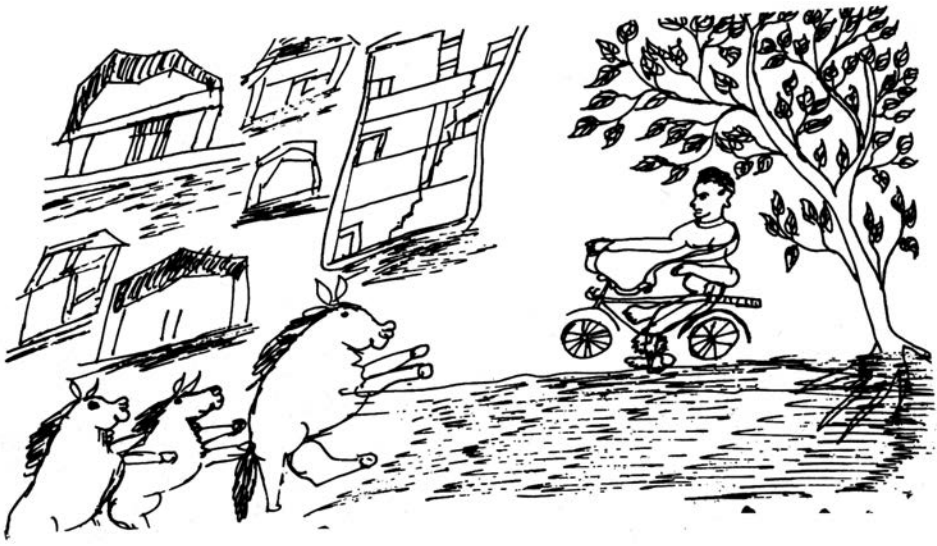

जनगढ़सिंह श्याम

बबलूजी टकराए गधे से

राजेश भरावा

एक बार सुबह के आठ बजे मैं घर से सदर बाज़ार की ओर जा रहा था। स्टेशन रोड की तरफ से तीन गधे जा रहे थे। तभी उधर से कुत्ते उन पर भौंके और झपट पड़े। गधे ज़ोर-ज़ोर से भागने लगे। उधर से बबलू आनन्द आटोगैरिज के सामने से सन्न सायकल से आ रहा था। दौड़ते हुए गधों में से एक बबलू की सायकल से टकरा गया। बबलू सायकल के नीचे आ गया। गधा उसके ऊपर। इसी प्रकार दूसरा गधा उस गधे पर गिर पड़ा। तीन गधे उस सायकल पर गिर पड़े। और फिर कुत्ते भी उन पर गिर पड़े। वहाँ गधों और कुत्तों का ढेर हो गया। फिर कुत्ते उठकर भागे, फिर गधे उठकर सदर बाज़ार की ओर बहुत दूर भाग गए। बबलू सायकल के नीचे ही पड़ा रहा।

उसके बाद बबलू को उठाकर हॉस्पीटल ले गए। वहाँ बबलू की जाँच चालू हुई। पर बबलू इस प्रकार की बात देखकर रोया नहीं। पर सब

राजेश भरावा, आठवीं, नामली, रतलाम, मप्र। *चकमक* जून, 88 में प्रकाशित।
जनगढ़सिंह श्याम, मण्डला, मप्र।

लोग इस प्रकार की बात देखकर ऐसे हँसे कि रोने लग गए। मेरी भी हँसी ऐसी चली कि पेट में दर्द होने लगा। फिर मैं भी हॉस्पीटल गया।

जब बबलू ठीक हो गया तो वह गधे से बहुत दुश्मनी रखने लगा। जब कभी गधा आता वह लकड़ी से मारकर भगा देता था। फिर दिवाली आई। बबलू फटाके लाया और उसने एक तरकीब सोची। उसने कुछ फटाके टीवी के पीछे छिपा दिए। कुछ फटाके लेकर वह दोस्तों को बुलाकर गाँव में गधा ढूँढने के लिए गया।

उनको एक कुत्ता और एक गधा मिला। उन्होंने कहा कि आज के दिन हम गधा यज्ञ एवं कुत्ता यज्ञ करेंगे। तो उन्होंने गधे और कुत्ते दोनों को खड़ा करके उनका यज्ञ किया। दोनों को सजाकर उनके पूंछड़ी पर बड़े फटाके बाँध दिए। तब गधा चीपों-चीपों करता हुआ गाँव में घूमा। फिर गधा ठाकुर के घर में घुस गया। जब फटाके फूटे तो ठाकुर की पगड़ी गधे के पैर में आ गई। ठाकुर इस अपमान को देख नहीं पाया और उसने बबलू को सज़ा दी।

उधर कुत्ते की पूँछ में फटाके बँधे थे। कुत्ता बबलू के घर में घुस गया। और टीवी के पीछे जाकर बैठ गया। उसे पता नहीं था कि यहाँ भी फटाके पड़े हुए हैं। जब टीवी के पीछे वाले फटाके फूटे तो टीवी की एक-एक चीज़ गाँव में उड़ गई। इस प्रकार बबलू को हानि हुई। बबलू ने कहा कि आज से गधा सिंह और कुत्ता सिंह दोनों ही मेरे मित्र हैं।

गोपाल सिंह अस्के

गाय के लिए पाला

इकबालसिंह अरोरा

हमारे घर में एक भी गाय नहीं थी। तब मेरे भाई नरेन्द्र ने पिताजी से कहा कि पिताजी हमारे घर में गाय नहीं है। तो वे एक गाय लेकर आए। वह गाय बहुत भूखी थी। पिताजी ने कहा, बेटा नरेन्द्र और इकबाल तुम दोनों जंगल जाकर गाय के लिए पाला (पत्तियाँ) ले आओ।

हम दोनों भाई और एक लड़का, दुर्बन नाम का, जंगल गए। जंगल में मेरा भाई पेड़ पर चढ़कर एक डाली पर बैठ गया और उस डाली को नीचे झुका दिया और बोला, दुर्बन डाली पूरी ताकत से खींचों। तब दुर्बन ने डाली खींची और मेरा भाई नीचे गिर गया। तब मैं रोने लगा और दुर्बन हँसने लगा। मेरा भाई बेहोश हो गया। तब मैं दौड़कर उसके लिए पानी लेने गया। मैंने एक खोदरी में से पानी पिला दिया। जब मेरे भाई

इकबालसिंह अरोरा, आठवीं पीपरी, देवास, मप्र।

गोपालसिंह अरके, आठवीं पीपरी, देवास, मप्र। कहानी व चित्र *चकमक* अप्रैल, 87 में प्रकाशित।

को होश आया। तब वह कहने लगा घर जाकर पिताजी को मत कहना। तब हम घर गए और पाला गाय को डाल दिया।

शाम को दुर्बन ने मेरे पिताजी को सारी बात बता दी। तब पिताजी ने गुस्से में आकर हम दोनों भाईयों को एक नीम के पेड़ पर बाँध दिया। मेरे बड़े भाई के हाथ में रस्सी बाँधकर एक डाल के ऊपर से निकालकर मेरे हाथ में बाँध दी। रस्सी छोटी थी। जब मेरे पिताजी बाँधकर अलग हटे तब मेरे भाई का वज़न ज़्यादा और मेरा कम होने से मैं ज़मीन से उठकर सट्ट से ऊपर पहुँच गया। तब मेरे पिताजी ने भाई को ऊपर उठा लिया और थोड़ा ऊपर कर दिया तो मैं नीचे आ गया। फिर पिताजी ने हम दोनों भाईयों को पीटा तो हम ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे तो वहाँ पर सारा मोहल्ला इकट्ठा हो गया और हमें छोड़ दिया।

दूसरे दिन मैं दुर्बन को मारने गया। मैं पेड़ की आड़ में छुप गया और उधर दुर्बन निकला तो मैंने पूरी ताकत से दुर्बन के पाँव में लट्ठ जमा दिया। तब वह चिल्लाया और मैं भाग गया। ऐसी थी पाले की कहानी।

श्वेता जोशी

कंट्रोल दुकान की शक्कर

हेमलता साहू

एक दिन मैं पढ़ रही थी। उस दिन 29 तारीख थी। मम्मी बोली जाओ और पता लगाओ कि कंट्रोल शक्कर की दुकान खुली है कि नहीं। मैंने कहा, मैं क्यों जाऊँ भैया नहीं जा सकते। तो वे बोलीं, बेटी वो तो कॉलेज गया है, मालूम नहीं कब लौटे। थोड़ी दूर ही तो है। चली जा। मैं कॉपी पुस्तक बन्द करके चप्पल पहनकर जाने लगी तो वे बोली, थैली और परमिट, पैसे भी ले जा नहीं तो बार-बार आएगी। सो मैं थैली में परमिट रखकर और पैसों को मुट्ठी में रखकर चल दी।

हेमलता साहू, आठवीं, कन्नौद, देवास, मप्र। *चकमक* फरवरी, 1986 में प्रकाशित।
श्वेता जोशी, सातवीं, पिपरिया, मप्र। *चकमक* जनवरी, 1987 में प्रकाशित।

पन्द्रह मिनिट बाद राशन की दुकान पर पहुँची। वहाँ देखा तो दिन में तारे नज़र आने लगे। क्योंकि वहाँ दुकान के आँगन में पैर रखने लायक जगह नहीं थी, सो किसी प्रकार अन्दर घुसने की जुगाड़ लगाने लगी। फिर दुकान में से एक लड़का निकला और सबको लाइन से लगाकर चला गया। थोड़ी देर लोग शान्त खड़े रहे। इतने में एक मेरे बराबर लड़की सैंडिल फटकारते हुए आई और मेरे आगे लगने लगी। मैंने उसे मना किया तो नहीं मानी, लड़ने लगी। मैंने सोचा लग जाने दो। वह सामने लग गई और मुझे मुड़कर घूरकर देखने लगी। मैं नहीं बोली। फिर लोग बाग लाइन तोड़ने लगे। मैं भी थोड़े आगे पहुँच गई। मेरा नम्बर भी आ गया। उस दुकानदार, जिसकी तोंद बढ़ी थी और जो आसन लगाए बैठा था, ने परमिट और पैसे माँगे मैंने दे दिए। वह बोला छुट्टे पैसे दो। मैं बोली नहीं हैं। तो बोला, दो माचिस ले लो। मैंने कहा, पैसे दो। वह बोला छुट्टे नहीं हैं और माचिस भी नहीं लेती। मैंने डरकर माचिस ले ली। फिर उसने शक्कर दे दी।

कुढ़ती हुई बाहर निकली तो सोचा, अब निकलूँगी कैसे, भीड़ तो बहुत है। पर जैसे-तैसे हिम्मत की और घुस गई। बाहर निकली तो पैर की एक चप्पल गोल थी। भीड़ में ही छूट गई। मैंने सोचा, भाड़ में जाए चप्पल। मैं तो घर चली। घर पहुँची तो मम्मी ने खूब डाँटा, चप्पल लेके आओ। मैं फिर आई और दो घण्टे बठकर जब भीड़ छटी तब मैंने चप्पल उठाई। मैं दुकानवाले को मन ही मन गालियाँ देते हुए घर आ गई। पहली बार मेरी ये हालत हुई। मैंने कान पकड़ लिए कि अब नहीं जाऊँगी।

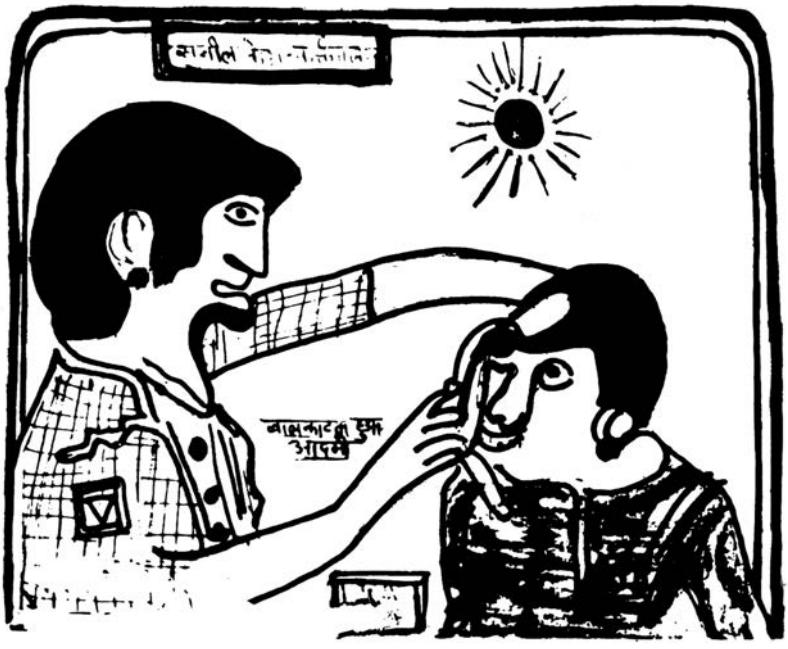

गगन जैन

भाई के बाल कटवाए

गोरधन सारवान

मैं एक बार अपने छोटे भाई मुकेश के साथ बाल कटवाने सुरेश नाई की दुकान पर गया।

नाई ने उससे पूछा, "तुम बाल कैसे कटवाओगे?"

हमारे भाई ने जवाब दिया, "मैं बाल फैशनदार कटवाऊँगा।"

मैंने अपने छोटे भाई से बोला कि, "जैसे बाल हैं वैसे ही छोटे करवा लो, पिताजी ने बोला है।" तो वह मेरी तरफ घूर-घूर के देखने लगा और फिर रोने लगा।" मैंने उससे बोला कि, "आप रोओ मत जैसे कटवाना चाहो वैसे ही कटवाओ।" वह चुप हो गया, हँस दिया और बाल कटवाने लगा।

नाई ने उसके बाल बहुत अच्छी तरह से काटे। वह एक-एक बाल को अपनी कैंची से काटता रहा। फिर उसने ब्लेड से दोनों कानों के पास (कलम) के बाल साफ किए। फिर पीछे बाँची (गर्दन) के बाल साफ किए। फिर उसने मुकेश के मुँह व बोंची पर पावडर लगाया। नाई ने मुकेश के बाल में तेल लगाकर मालिश की, बाल जमाए। और अन्त में मैंने उसके पैसे चुकाए। फिर हमने उससे विदा ली।

जब हम घर पहुँचें तो पिताजी ने उसे डाँटा, साथ मुझे भी डाँटा। इसका तात्पर्य यह है कि आजकल के छोटे-छोटे बच्चे भी फिल्म देखकर नई डिजाइन की कटिंग व नई डिजाइन के बाल जमाना सीखने लगे हैं।

गोरधन सारवान, आठवीं, कन्नौद, देवास, मप्र।

गगन जैन, आठवीं, धार, मप्र। कहानी व चित्र *चकमक* फरवरी, 1986 में प्रकाशित।

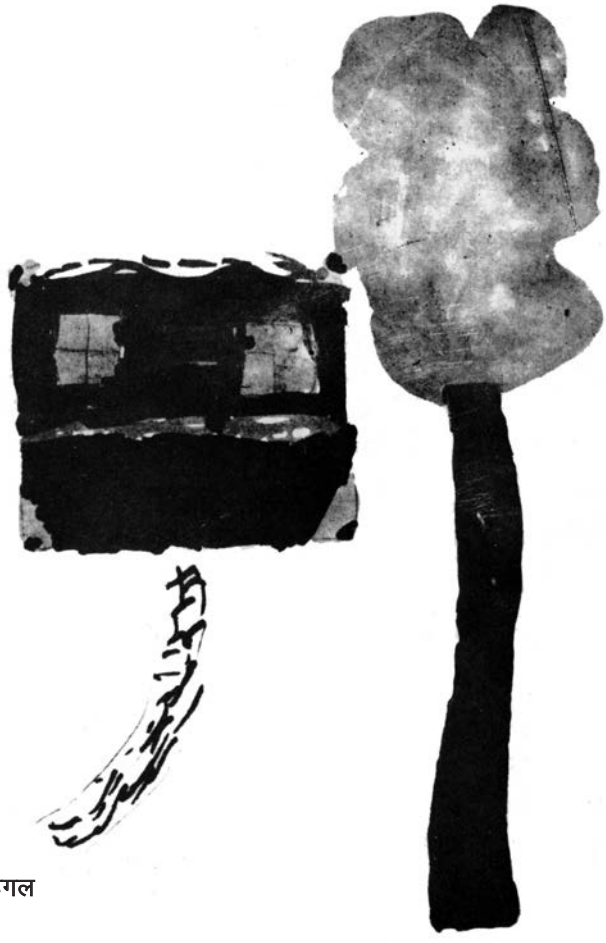

ऋतु सहगल

बसकारे में घर गिरा

शोभा व्यास

रिमझिम-रिमझिम पानी की वर्षा हो रही है। कोई वसुन्धरा के बागानों को सींच रहा है। काले-काले बादल आसमान में कभी-कभी लड़ पड़ते हैं तो धरती का इन्सान काँप जाता है।

छोटा-सा आँगन। आँगन के कुछ आगे देहलान और एक छोटा-सा कमरा है। यही हमारा इस बरसात में सोने, बैठने और खाने के लगभग सभी काम में आता है।

शोभा व्यास, आठवीं, बनखेड़ी, पिपरिया, मप्र। *चकमक* जुलाई, 1985 में प्रकाशित।
ऋतु सहगल, सात वर्ष, दिल्ली।

बादलों ने सम्पूर्ण आसमान पर आधिपत्य जमा लिया। घने अँधेरे में कभी-कभी बिजली चमक पड़ती है। हम चिमनी जलाते और उसे हवा पल-पल इस कदर बुझा देती कि जैसे हमसे खिलवाड़ कर रही हो। आखिर हम परेशान होकर बैठ गए अपने दादा जी के पास। उन्होंने तम्बाखू का बलगम उगला और पिताजी से बोले, "दीवार अधिक सीड़ गई है। कहीं गिर न जाए।"

तभी बऊ अपनी त्यौरी चढ़ाकर बोली "कल की गिरने की आज ही गिर जाए। कभी तुमने काम किया है। कम से कम पक्का मकान बनवा देते।"

दादा अपनी सफेद मूँछों को ऊपर-नीचे करते हुए बोले, "मैंने क्या नहीं किया? रही मकान की बात, तू कहे तो कल ही पक्का बनवा दूँ।"

बऊ ने आँखों की पुतलियों को नचाते हुए कहा,'ऐसे कल-कल की कहकर तो ज़िन्दगी गुज़ार दी।'

इधर दादा-बऊ ज़बान लड़ा रहे थे। तो उधर बादल आकाश को अखाड़ा समझकर नागपंचमी के पहलवान से लड़ रहे थे। वर्षा और तेज़ हो गई। छप्पर बैठ चुका था। अचानक पानी इतनी तेजी से बरसा की हमारी दीवार दम तोड़ गई। धड़ाम की आवाज़ से दीवार गिर गई। दादा-बऊ का झगड़ा मिनटों में खत्म हो गया। जैसे हमारे घर में मुसीबत का पहाड़ टूट गया। माँ उस समय शाम का खाना पका रही थीं। वे जल्दी से उठीं और नुकसान से बचाने के लिए सामान उठाने लग गई।

जब पानी रुका तो सभी सबेरे से दीवार का मलबा ढोने लगे। हम बीच-बीच में थोड़ी देर साँस ले लिया करते थे। लेकिन जल्दी पड़ रही थी। कि कहीं फिर से पानी न आ जाए। लगभग दोपहर एक बजे तक दीवार का मलबा इकट्ठा हो गया। वर्षा के पानी के सहारे मिट्टी मचाई और दूसरे दिन से सबने मिलकर दीवार उठाना शुरू किया। दीवार लदक-लदक जाती थी। अत: धीरे-धीरे उसे ऊपर बढ़ाते थे। चार दिन में दीवार तैयार हो गई। तब कहीं हम लोगों ने चैन की साँस ली।

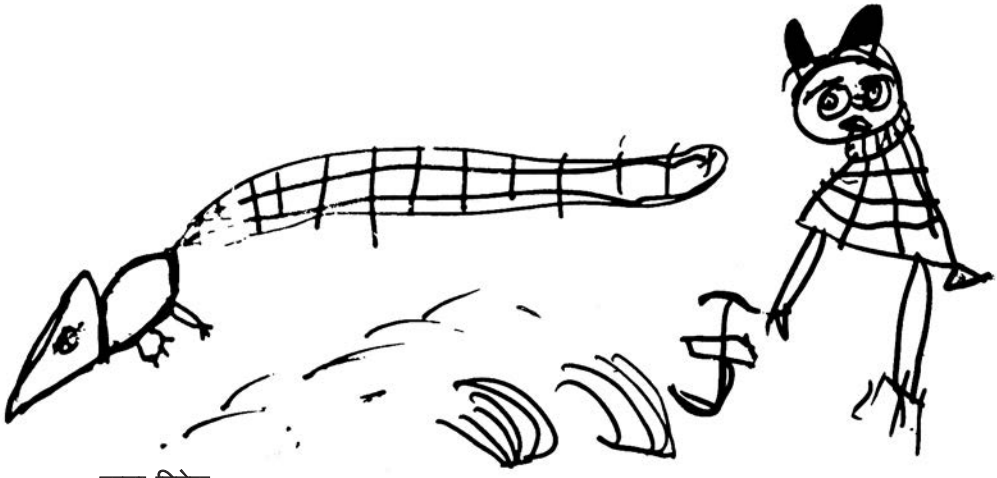

ऋचा विवेक

बिल्ली और चूहा

प्रफुल्ल परसाई

बिल्ली और चूहा नाम के दो मित्र रहते थे। एक दिन बिल्ली अपने गाँव जा रही थी। चूहा ने पूछा, तुम कहाँ जा रही हो? बिल्ली ने कहा, मैं अपने गाँव जा रही हूँ। चूहा ने कहा, मुझे भी साथ ले चलो। बिल्ली ने कहा, मैं नहीं ले जा सकती दोस्त। दोस्त, तुम मेरे घर की रखवाली करना।

बिल्ली चली गई। चूहा दिन-भर घर की रखवाली करता रहा। एक दिन चूहा ने अपनी शादी कर ली। उसके दो बच्चे हुए। चूहा ने बिल्ली के कपड़े चुरा लिए और अपने बच्चों को पहना दिया। बिल्ली मस्त चली आ रही थी। उसने दूर से देखा की उसके कपड़े उसने अपने बच्चों को पहना दिए तो उसे बहुत गुस्सा आया। बिल्ली चूहे को मारने दौड़ी तो चूहा अपनी जान बचाकर भागा।

प्रफुल्ल परसाई, ऋचा विवेक, चार वर्ष, भोपाल, मप्र। कहानी व चित्र *चकमक* जनवरी, 1987 में प्रकाशित।

घर में आया गुहेटा

ऋषि कुमार तिवारी

साँप, बिच्छु या गुहेटा के दिखते ही हमारे मन में डर समा जाता है। और उसे मारने के उपाय सोचने लगते हैं, या फिर उसे दूर भाग जाने पर विवश करते हैं। पिछले वर्ष जून माह के आखिरी सप्ताह में ऐसी ही घटना मेरे घर में घटी जिसका वर्णन इस प्रकार है:

मेरी माँ बासन माँज रही थीं कि एकाएक उनकी नज़र एक भागते हुए गुहेटा पर पड़ी। घाम खूब तेज़ था, चिड़ियाँ चिकचिका रही थीं। माँ ने घबराकर बासन माँजना छोड़ दिया। और मुझे तथा मेरे भाई राजू को चिल्लाकर बोलीं, "अरे, दौड़ो, बड़ो भारी गुहेटा। गुहेटा अपनी जहाँ लकड़ी धरी है वहाँ गया।"

शोर सुनकर पास के घरों से भी लोग निकल आए और लाठियाँ लेकर अपनी-अपनी हद में बैठ गए, जिससे गुहेटा उन लोगों के घरों में न जा पाए। हमारे घर में ही घुसा रहे। मेरे पिताजी आए। उन्होंने सबको धीरज दिया, "घबराने की ज़रूरत नहीं है, वह भाग जाएगा। वह भी तो अपन लोगों से डर रहा होगा। शोर कम होने पर अपने आप चला जाएगा।"

सबको भाग जाने को कहा, लेकिन फिर भी लोग तथा लुगाइयाँ अपने घरों के पास गुहेटा के निकलने का इन्तजार करते रहे। हमने भी यह चाल खेली कि ये लोग चले जाएँ तब गुहेटा को निकलने का मौका देवें। 15-20 मिनिट के बाद हमने लकड़ियों के ढेर में तथा बागड़ में लाठी से खड़खड़ाया तो गुहेटा वहाँ से भागा लेकिन उसे भागने का मौका न मिला क्योंकि वहाँ दूसरे घर के लोग छेड़ी में लाठी लेकर बैठे थे। वह फिर लौटकर पुन: लकड़ियों के ढेर पर चलकर हमारे घर में दीवार पर चढ़कर घुस गया। अब समस्या विकट थी।

कहते हैं गुहेटा काट खाए तो ज़हर चढ़ जाता है, मर जाते हैं। इससे और भी डर लगे। कोई घर में न जाए। पुरा-पड़ौस से बल्लम, बरछी, लाठी लेकर 4-5 हमारे मित्र आ गए, लेकिन कुछ न हुआ। गुहेटा चिमाई

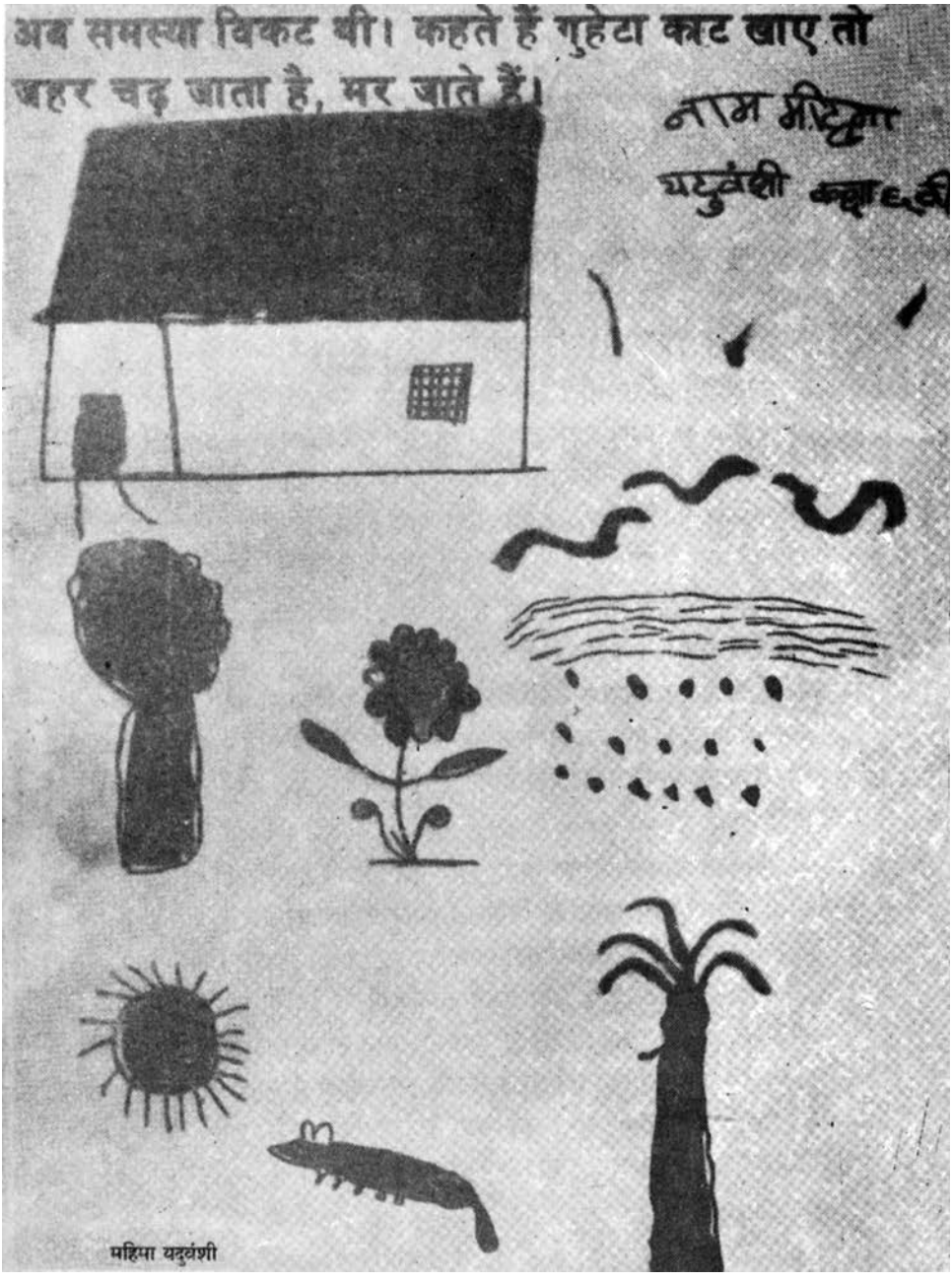

ऋषि कुमार तिवारी, आठवीं, बनखेड़ी, पिपरिया, मप्र।
महिमा यदुवंशी, छठवीं, पिपरिया, मप्र। कहानी व चित्र *चकमक* जुलाई, 1985 में प्रकाशित।

दाबकर बैठ गया होगा। अन्त में हारकर हम भी बैठ गए। और उसके अपने आप चले जाने का इन्तजार करते रहे। जब तक आँखों से उसे निकलकर जाते हुए न देखते, चैन कहाँ? ऐसे करते-करते साँझ हो गई। हिम्मत करके घर में खाना आदि के लिए तो जाना ही पड़ेगा। एक हाथ में लाठी लेकर जाते तनक सी सरसराहट से गुहेटा होने का अन्देशा होता, लेकिन चूहा निकलता। होते-होते उस ओर से निश्चिन्त हो गए। सोचा भाग जाएगा। पानी भी नहीं गिर रहा था, घाम तेज़ था।

बुधवार के दिन अचानक हमने उस गुहेटा को घर के भीतर दूध का लोटा उतारते देखा। अब तो बड़ी आफत थी। फिर वह घर के ऊपर खपरों में से निकला तथा बार-बार पूरे घर में बाहर भीतर हो रहा था।

अब हमारे सामने बड़ी समस्या थी। कैसे मारें उसे? हमने देखा कि वह बड़ेरी पर खपरों में से निकलने की कोशिश में गया है। एक उपाय सूझा कि सपेरों को बुलाया जाए। मैं सपेरों को बुलाने दौड़ा जो समाधि के पीछे रहते हैं। इधर घर में इसे बल्लम से मारना चाहा लेकिन घर में ऊपर दाँव नहीं लग रहा था। बूढा सपेरा और उसका 13-14 साल का लड़का दौड़े-दौड़े आए और लड़के ने लपककर गुहेटा की पूँछ पकड़ ली और उसे खींचना चाहा पर वह नहीं खिंचा। बूढा सपेरा भी उसकी पूँछ पकड़कर लटक गया, लेकिन गुहेटा टस से मस न हुआ। फिर लड़के ने घर के ऊपर चढ़कर और बूढे सपेरे के पूँछ पकड़े रहने से लड़के ने साधारण तौर से, बिना डरे, आसानी से गुहेटा की गरदन पकड़ ली और खींचकर ले आया। लेकिन हमारे घर के खपरे फूट गए जिससे हमें बाद में बड़ी परेशानी हुई। सपेरा बोला, "काल था बाई शंकर भगवान की किरपा से बड़ी कलह टल गई। लियाओ पाँच रुपए और कपड़ा तथा अनाज।" बड़ी मुश्किल से वह दो रुपए, एक कमीज तथा आटा लेकर ही रहा।

अब फिर सुनो। 3-4 दिन बाद फिर से दूसरा गुहेटा निकला जिसे हमने चुपचाप आ जाने दिया। तथा सपेरे से पकड़वा दिया। फिर दो रुपए तथा एक घड़ा देना पड़ा। बाद में पता चला कि सपेरे ने गुहेटा तुरन्त मार दिया। उसकी खाल निकाल ली थी। जबकि उस दिन उसने एक जड़ी-बूटी निकालकर उसके ऊपर से उतारी थी तथा मंत्र पढ़ा था, तथा 15 दिन रखने का कौल किया था।

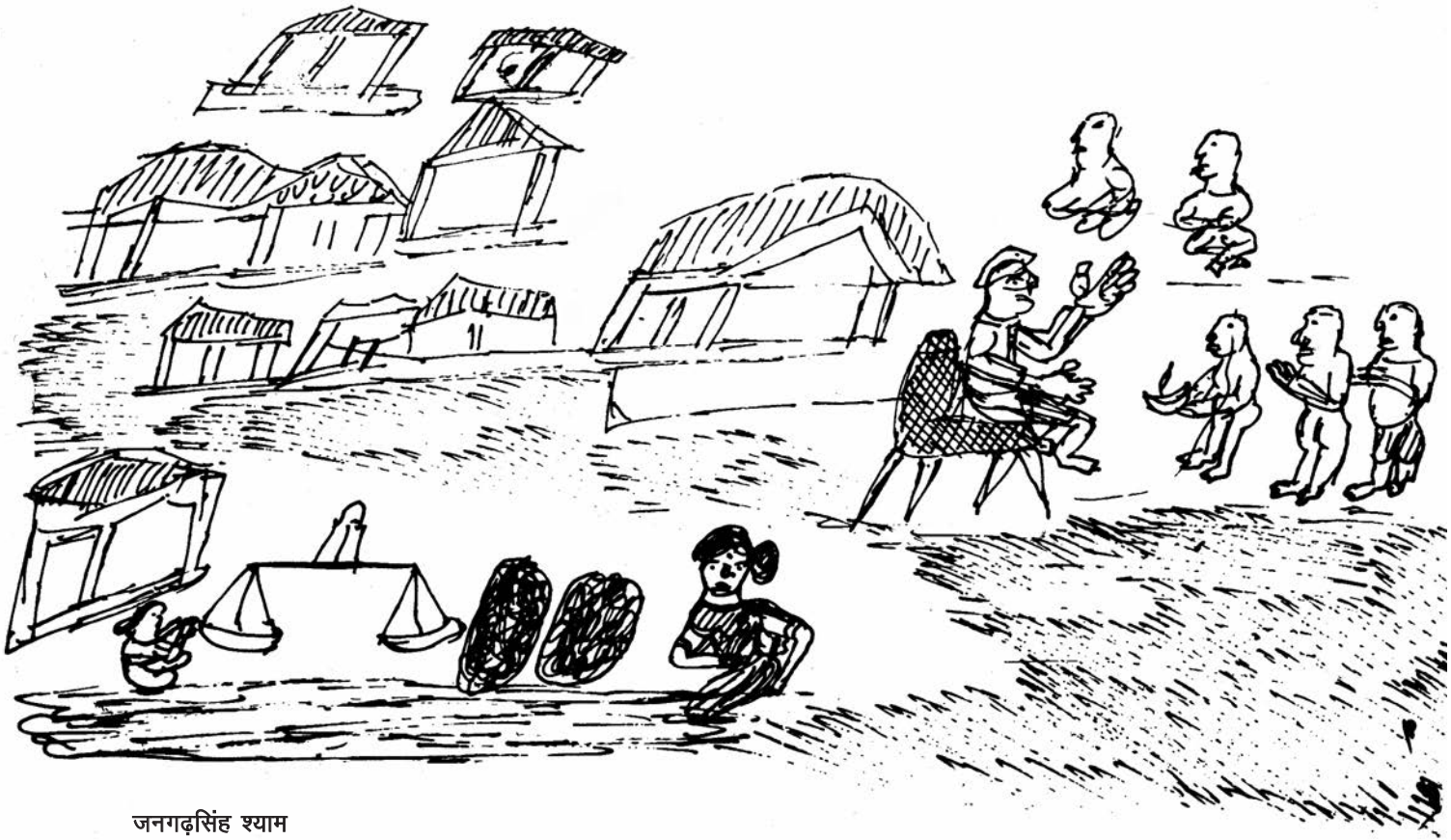

जनगढ़सिंह श्याम

गाँव में आए नेताजी

सीमा खरे

बात उस समय की है जब हमारे ही क्षेत्र के एक विधायक महोदय प्रदेश के वनमंत्री थे और भैंरोघाट पिपरिया आए हुए थे। भैंरोघाट जबलपुर जिले की पाटन तहसील का 3000 की आबादी वाला गाँव है। यह गाँव राजनीतिक दृष्टि से काफी पिछड़ा दिखाई देता है। इसका प्रमाण मैं सच ही सच घटित घटना से दे रही हूँ।

हमारे गाँव में एक "जिन्नत बी" नामक मुसलमान महिला हैं, जो कि रुई के धंधे से अपना जीवन यापन चलाती हैं। वह शाहपुरावाली के नाम से जानी जाती हैं। जिस दिन नेता जी गाँव में आए उस दिन वे कुछ ज़्यादा ही प्रसन्न नज़र आ रही थीं। प्रसन्नता का राज उस समय खुला, जब उन्होंने अपने मुख से बात उगली।

उन्हीं के शब्दों में, "मैंने सुनो कि नेताजी आ रहे हैं। जहाँ-ताँ कलश जल रये हैं। मैं खाना बनातई से भगत चली आई, आके देखो तो नेता जी दिखाऊतई ने हते, सबरे आदमी-आदमी से दिखात हैं। मोरे बगल में नर्स-बाई ठाँड़ी हतीं, मैंने उसने पूछो कि नेताजी कहाँ हैं, जो आवे बारे हते। उनने एक आदमी की ओर हाथ बढ़ा दओ, जो कि धुतिया-कुर्ता पहनें हतो और टोपी लगायें थो। मैं तो देखतई से चकित हो गई, कि अरे नेता सोई (भी) आदमी घाँई (जैसा) होत, मैं तो समझत थी कि कोई देवी-देवता हुइए, जब तो आदमी देंखबे खों मरे जा रये हैं। अरे जब उनने बोल्बो शुरू करो तो मैं तो मुँह पलटा खें घरे आ गई, कायकि बे सोई आदमी घांई बोलत हते, और घरे आ कें खूब पछताई कि रोटी छोड़खें तो मैं गई, और देवी-देवता कछु नें मिलें।"

सीमा खरे, दसवीं, भैंरोघाट, जबलपुर, मप्र। *चकमक* अक्टूबर 1987 में प्रकाशित।
जनगढ़सिंह श्याम, मण्डला, मप्र।

बालाराम, आठवीं, उमरधा, होशंगाबाद, मप्र। *चकमक* जनवरी, 1987 में प्रकाशित।
दिव्या अग्रवाल, छठवीं, भोपाल, मप्र।

ढोंगी साधू

बालाराम

एक दिन हमारे इधर ढोंगी साधू आए तो उन्होंने कॉपी में लिख दिया कि हम मौनी साधू हैं, हमसे ज़्यादा बात मत पूछो। तो वे ऐसे साधू थे जो कि रात भर बोलते थे और दिन भर मौनी रहते थे। एक दिन एक आदमी ने कहा, साधू महाराज इस कठर की सब्जी कैसे बनाओगे तो उसने सहन (इशारा) से बता दिया। तो वह आदमी समझ नहीं पाया तो ढोंगी साधू ने बोलकर कहा, कठर को छीलकर सब्जी बनाएँगे। तो आदमी हँस दिया और ढोंगी साधू से बोला, कि तुम साधू नहीं हो तुम तो पाखण्डी हो। ढोंगी साधू चुप रह गया तो आदमी बोला, साधू अब बोल क्यों नहीं रहे। साधू बोला, तू मुझसे दुआ ले ले मगर किसी को कुछ कहना नहीं। तो आदमी बोला कि तू दुआ मुझसे ले ले क्यों मनुष्यों को बता रहा है कि मैं साधू हूँ। तू साधू नही तू पाखण्डी है। साधू गुस्सा होकर बोला, तुझे भस्म कर दूँगा। तो आदमी बोला कि मैं तुझे भस्म कर दूँगा।

तो गाँव वाले लोग और लुगाहियें और बाल-बच्चे भी आए तो ढोंगी साधू बोला कि मैं तुम्हें भस्म कर दूँगा। अगर बात की तो। तो एक लड़का बोला तू भस्म करेगा। तो मैं तुझे कुल्हाड़ी से काट दूँगा। ढोंगी साधू बोला कि अब मैं भस्म कर रहा हूँ और धूल उठाकर बैठ गया तो सब लोग बोले, नहीं महाराज नहीं महाराज ऐसा मत करो। तो एक लड़का बोला कि साधू की ऐसी की तैसी। साधू ने और धूल उठा ली और बोला देख। तो लड़का बोला की तू भी देख। और उनने लाठी उठा ली तो ढोंगी साधू ने उसकी तरफ धूल फेंक दी। तो लड़के ने समझा कि भस्म कर दिया। उसने भी साधू के सिर में लाठी मार दी। तो ढोंगी साधू ने आग जला ली और बोला अभी तो भस्म नहीं किया, अब भस्म कर दूँगा तुम सबको। तो सब बोले कि कर दे। ढोंगी साधू ने आग हाथ में ले ली और एक बुड्ढे की तरफ दौड़ा और उसकी दाढ़ी में आग लगा दी। तो बुड्ढे ने भी अच्छे चाटे मारे। ढोंगी साधू का उफान उतर गया और तीन दिन भूखा रहने दिया। फिर ढोंगी साधू को मार-पीटकर भगा दिया। ऐसे होते हैं ढोंगी साधू।

टमाटर और चोर

शकीला बानो

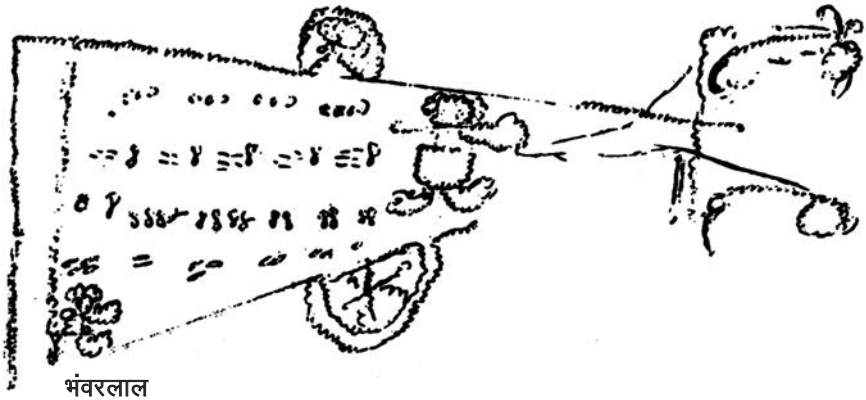

भंवरलाल

एक समय की बात है, जब मैं बहुत छोटी थी। मेरे पिताजी मण्डी में टमाटर बेचने जा रहे थे। मैं भी उनके साथ मण्डी चल दी। उस समय मैं बहुत चतुर और होशियार नहीं थी। मैं गाड़ी में बैठे-बैठे यह सोच रही थी कि सब्जी मण्डी कैसी होगी, तभी अचानक हमें रास्ते में चार चोर मिले। उनमें से एक बोला, गाड़ी यहीं खड़ी कर दो वरना मैं तुम्हें भून डालूँगा। दूसरा बोला, अगर किसी ने भी हिलने की कोशिश की तो मैं सबको कच्चा खा जाऊँगा। तभी मैं डरते-डरते बोल उठी, अरे भई, पहले इतने सारे टमाटर तो खा लो, फिर हमें खा लेना। उनमें से एक चोर मेरे पास आया और बोला, तू बहुत बकर-बकर कर रही है, तुझे जिसने बनाया वो मिट्टी कहाँ से लाया? मैं बोली, टमाटर के खेत से! सभी चोर हँस दिए। और एक बोला, खोदा पहाड़ और निकली चुहिया। हम लोगों के पास से उन्हें कुछ नहीं मिला, और वे खाली हाथ रह गए।

इस मुसीबत से बचे थे कि तभी आगे चलकर हमें एक गधा मिल गया, जो निहायत शरीफ लेकिन बेशर्म था। इतना खूबसूरत गधा मैंने कभी

शकीला बानो, सातवीं, आगरोद, देवा, मप्र। *चकमक* फरवरी, 1986 में प्रकाशित।
भंवरलाल, छठवीं, लसूड़िया राठौर, मंदसौर, मप्र।

देखा नहीं था। मैं पिताजी से बोली कि इस गधे को अपनी गाड़ी में बिठा लो। पिताजी चिल्लाकर बोले, अगर हम इसे अपनी गाड़ी में बैठा लेंगे तो यह हमारी गाड़ी ही तोड़ देगा। ये तो चार पैर का गधा है। तुझे मण्डी में दो पैर के गधे दिखाऊँगा।

बात करते-करते हम लोग मण्डी के करीब आ पहुँचे थे। मण्डी में बहुत भीड़ थी। मेरे पिताजी जिस आड़तिए को माल देते थे उसके नौकर हमारी गाड़ी के करीब आ चुके थे, और मुझे देखकर हँस रहे थे। मैं हैरान थी कि ये लोग क्यों हँस रहे हैं। उननें से एक बोला, देखो यार इस लड़की ने कितना प्यारा काजल लगा रखा है। दूसरा बोला, इसके बाल कितनी विचित्र तरह से कंघी किए हुए हैं। उनमें से एक ने मुझे गोद में उठा लिया, और हलवाई की दुकान में ले जाकर जलेबी और पोहा खिलवाया। पोहा, जलेबी खाकर मैं खुश हुई। क्योंकि, मेरी इस छोटी-सी उम्र में ये सबसे अच्छा दिन था जब मैंने पहली बार जलेबी और पोहा किसी हलवाई की दुकान से खाए। इन्हें तो मैं पहचानती भी नहीं थी!

अब हमारे टमाटर नीलाम हुए। बहुत पैसे मिले मेरे पिताजी को, दोनों जेब भर गए। टमाटर बेचकर हम वापस लौटे तो रास्ते में बारह चोर मिले। वे हमारे करीब आ रहे थे। मेरे पिताजी ने बन्दूक उठाई और हवाई फायर किए, जिसके डर से वे सब भाग गए। इस तरह हम सभी अच्छी तरह अपने घर लौटे। लौटकर सारी कहानी घर में अपने भाई-बहनों को सुनाई। सब बोले, अच्छा हुआ हम नहीं गए नहीं तो कोई हमें उठाकर ले जाता। नहीं चाहिए हमें ऐसे जलेबी और पोहे!

ऋचा विवेक

सरपंच सहाब ने कुंडी खुदवाई

मेहरबान

एक बार गाँव में सरपंच सहाब ने स्कूल के पास कुण्डी खोदाई तो उसमें स्कूल के दो बालक पड़ गए। तो फिर हमारे गाँव के लोगों ने कहा कि सरपंच सहाब आपने बहुत गलती की है। तो सरपंच सहाब ने कहा कि मैंने क्या गलती की है। तो हमने कहा कि स्कूल के पास कुण्डी खोदाई क्यों। तो सरपंच सहाब ने कहा कि मैंने तो तुम्हारे पानी के लिए खुदवाई। तो हमने कहा कि तुमने खुदवाई तो इसको तुमने पूरी पक्की क्यों नहीं बनवाई। तो सरपंच सहाब ने कहा कि पैसा नहीं तो कैसे बनवाएँ। तो सब लोग ने कहा कि तुम्हारे पास सरकारी पैसा है तुम क्यों नहीं खर्च करे हो। तो सरपंच सहाब ने कहा कि पैसा तो है पन थोड़ा है। तो हमारे गाँव वाले मैम्बर सहाब ने कहा कि मैं तुमको पैसा दूँगा। तो सरपंच सहाब ने कहा कि कुण्डी नहीं बाँधी जाएगी।

तो फिर हमारे गाँव वाले लोगों ने रिपोर्ट की तो पुलिस आ गए। तो सरपंच सहाब ने कहा कि मेरे पास पैसा नहीं तो काय से कुण्डी बंधाई जाए। तो पुलिस वालों ने कहा कि आपने स्कूल के पास कुण्डी खोदना किसने कहा। तो सरपंच सहाब कुछ न बोले। तो हमने पुलिस वालों से कहा कि सहाब तुम ये कुण्डी पुरवा दो। तो पुलिस वालों ने उनको कहा कि अभी नहीं पुरवाई जाएगी। ये तो सरकारी फंदा है। तो फिर हमको क्या करना है। पुलिस वालों ने कहा कि तुम्हारी क्या इच्छा है। तो हमने कहा कि सहाब ये कुण्डी पुरवा दीजिए। और इसके पास एक बर्मा (हैण्डपम्प) लगा दीजिए तो फिर पुलिस वाले ने कहा कि तुम्हारी यही इच्छा है तो हमने कहा हाँ साहब यही इच्छा है।

मेहरबान, खरेली, देवास, मप्र। *चकमक* जनवरी, 1987 में प्रकाशित।
ऋचा विवेक, छह वर्ष, भोपाल, मप्र।

शादी की याद

साबिर हुसैन

न काका और न बुआ की शादी की याद है मुझे। और न भाई की या बहिन की शादी हुई अभी। किन्तु मुझे मेरे एक दोस्त की बहिन की शादी की थोड़ी-थोड़ी याद है। जिसे मैं आपके सामने पेश करता हूँ।

शादी स्थल तो मुझे याद नहीं और बारात किधर से आई थी, यह भी मुझे याद नहीं। क्योंकि उस समय मेरी अवस्था बहुत छोटी थी। फिर भी मुझे जितनी याद है उतनी इधर बता रहा हूँ।

बारात ट्रेलर से आई थी। बारात में लगभग 200 या 250 व्यक्ति थे। ट्रेलर की गड़गड़ाहट (दचड़-दचड़) से सारे बाराती थके हुए थे। इसलिए स्कूल के सामने पड़ी जगह पर एक लम्बी चादर बिछाकर सो गए। उनकी नींद देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था कि इनके लिए कंकड़ों वाली जगह मानो फूलों के बिस्तर हैं।

साबिर हुसैन, आठवीं, जुन्हैठा, होशंगाबाद, मप्र। सचिन दुबे, छठवीं, पिपरिया, होशंगाबाद, मप्र। कहानी व चित्र *चकमक*, जुलाई, 1985 में प्रकाशित।

फिर सभी बारातियों के लिए चाय व नाश्ता भेजा गया। इसके बाद उनको निकाह (भाँवर) के लिए बुलाया गया। निकाह होने के बाद बतासे बाँटे गए। इस प्रकार निकाह के बाद खाना नहीं खाते थे तो एक बुजुर्ग ने उनसे पूछा, "क्या बात है भाई, खाना क्यों नहीं खा रहे?"

इनने बोला, "हमें घड़ी चाहिए।" बुजुर्ग बोले, "हम घड़ी देंगे। पहले इस घडी में बताओ अभी कितना बजा है?"

"हमें क्या मालूम कितना बजा?"

"तो आप को मालूम नहीं तो घड़ी किस मर्ज़ के लिए चाहिए।"

इस पर बोले, "तो रेडियो चाहिए।"

सभी लोगों के कहने पर रेडियो दिया गया। दहेज में बहुत से बर्तन घर से तथा संबंधियों के द्वारा दिए गए। विदाई के समय तक रेडियो बजाया। फिर कहने लगे, "पुराना दिया है। इसे हम नहीं लेंगे।" और देकर भागने लगे।

अब बेचारे हमारे मित्र के पिताजी एक जगह, उनकी अम्मा एक जगह और मित्र एक जगह रोने लगे। लड़की (मित्र की बहिन) पर क्या गुज़री ये बात हमें नहीं मालूम।

बड़ी मुश्किल से दुल्हा मियाँ को मनाकर लौटाया गया। विदाई का समय आया। जब लड़की की विदाई हुई तो लड़की व उसके माँ, बाप, भाई, बहन रोने लगे। यह बात हमें ठीक मालूम नहीं हुई जब ट्रेलर पर लड़की (दुल्हन) बैठ रही थी तो उसके पैर से नायलोन की चप्पल निकलकर गिर गई। इस पर लड़की (दुल्हन) ने कहा, "कोई भी बाराती इस नायलोन की चप्पल को नहीं उठाना। इसे उठाएँगे दुल्हे मियाँ।"

दुल्हा मियाँ बोले, "मैं क्यों उठाऊँ?"

"उठाना पड़ेगा।"

"क्यों?"

"मेरे बाप ने 15,000 रुपए क्या हराम के दिए हैं?"

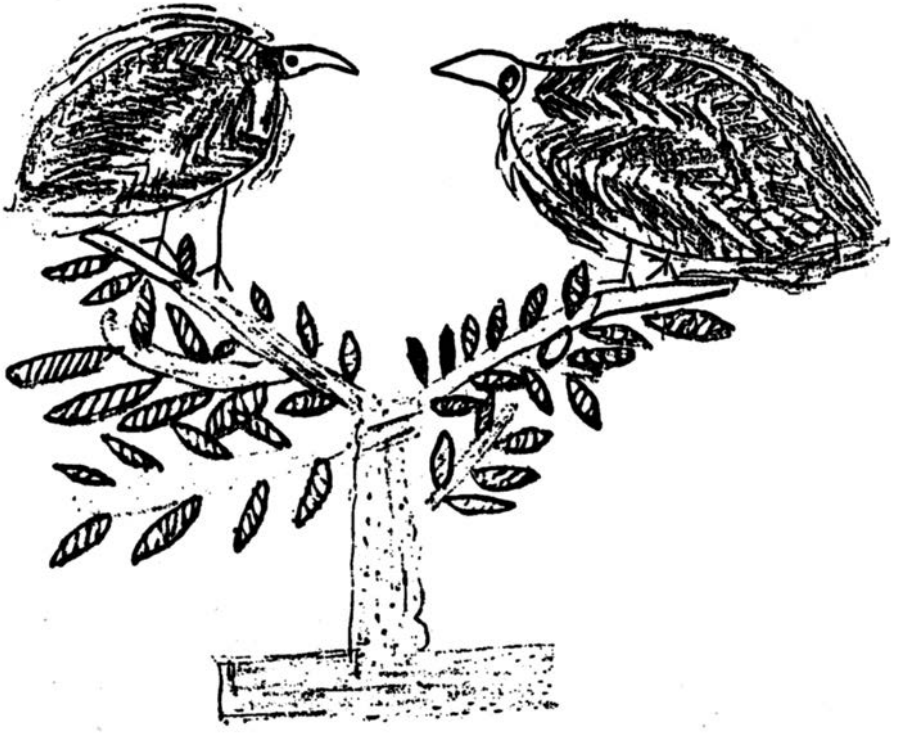

मनोज कुमार

कोयल किस के लिए गाती है ?

मनोज कुमार

एक जंगल था। उस जंगल के एक पेड़ पर बैठी कोयल अपनी सुरीली आवाज़ में गा रही थी। उसकी सुरीली आवाज़ सुनकर कुछ पक्षी उस जगह पहुँच गए। पक्षियों ने पूछा, "तुम क्यों गा रही हो?" तो कोयल ने जवाब दिया, "मैं अपने लिए गा रही हूँ। मैं बिना गाए नहीं रह सकती। मुझे गाना अच्छा लगता है।" यह सुनकर पक्षियों ने उसे वहाँ से भगा दिया।

तब वह कोयल कुछ दूर जाकर एक दूसरे पेड़ पर बैठ गई। वहाँ एक दूसरी कोयल बैठी थी। दूसरी कोयल ने पूछा, "तुम उदास क्यों हो?" पहली कोयल ने पूरा किस्सा बताया। दूसरी कोयल ने कहा, "तुमने गलत जवाब दिया। उन्होंने मुझसे भी यही पूछा था। मैंने कहा कि मैं तो तुम्हें सुनाने के लिए गा रही हूँ। तुम्हें खुश करने के लिए गा रही हूँ।"

चित्र व कहानी: मनोज कुमार, आठवीं, चौरई, मप्र। *चकमक* दिसम्बर, 1987 में प्रकाशित।

ममता साहू

घर में हुई कथा

वन्दना सोनी

आज से करीब तीन साल पहले की बात है। जब मैं कक्षा चार की छात्रा थी। तब मैं मेरे गाँव बीकोर ज़िला नरसिंहपुर में पढ़ती थी। मेरा गाँव नर्मदा के किनारे हैं। अत: वहाँ पर पूजन-पाठ, कथा-प्रवचन अधिक होते हैं।

एक बार हमारे गाँव में काशी से पंडित जी, तिवारी जी के यहाँ पर आए। तिवारी जी के यहाँ कथा का प्रोग्राम रखा गया। पंडित जी के मंत्र में ऐसी शक्ति थी कि वे अग्निदेव को प्रगट कर देते थे। उस दिन से सभी तिवारी जी के यहाँ जाने लगे। उनके घर आदमी, औरतों और बच्चों की भीड़ लगी रहती।

मुझे और मेरी मम्मी को मुश्किल से जगह मिली। मैं तो धीरे-धीरे खिसकती हुई पंडित जी के सामने की लाइन में बैठ गई। कथा सुनने के बाद पंडित जी ने सभी से कहा, "अब अग्निदेव को प्रकट करेंगे और हवन कार्य पूर्ण करते हैं।"

इस तरह पंडित जी ने मंत्र पढ़ते हुए शीशी का जल लेकर आम की लकड़ियों पर डाल दिया। वहाँ पर अचानक ही आग प्रगट हो गई। लकड़ियाँ चट-चट करती हुई जलने लगी। सभी आश्चर्य कर रहे थे। मैं तो घबराकर मम्मी के पास पहुँच गई थी। किन्तु गाँव के लोग अग्निदेव को प्रणाम कर रहे थे। उस दिन पंडित जी को बहुत पैसे मिले।

दूसरे दिन से कथा करने को पंडित जी को फुर्सत ही नहीं मिलती थी। उनकी प्रशंसा होने लगी। वैसे तो कथा का सामान एवं पंडित जी के नेग बहुत महँगे थे। फिर भी अग्निदेव के कारण सभी कथा कराते थे। मेरे मम्मी-पापा ने भी पंडित जी से कथा कराने को कहा। पंडित जी के पास एडवांस बुकिंग थी। उन्होंने चार दिन बाद का समय दिया। मम्मी ने

वन्दना सोनी, सातवीं, पिपरिया, मप्र। *चकमक* नवम्बर, 1985 में प्रकाशित।
ममता साहू, छठवीं, पिपरिया, मप्र।

कहा, "पंडित जी, मेरा बेटा पास हो जाए, हमें आशीर्वाद दो।" पंडित जी ने कहा, "ठीक है, कथा अच्छी तरह होना चाहिए। तुम्हारी मनोकामना पूरी हो जाएगी।"

दूसरे दिन मेरे भैया इन्दौर से आ गए। वे उस समय इन्दौर के गुजराती कॉलेज से बी.एस.सी. कर रहे थे। उन्होंने जब यह सुना कि पंडित जी अग्नि प्रगट करते हैं, तो वे बहुत आश्चर्य में पड़ गए। किन्तु जब उन्होंने पटेल की कथा में अग्नि को प्रगट होते देखा तो वे कुछ सोचने लगे।

दूसरे दिन हमारे घर पर कथा का आयोजन हुआ। हमने गाँव के सभी लोगों को बुलाया। मेरा भाई सुबह से नहाकर पंडित जी के साथ था। जब कथा प्रारम्भ हुई तो हमने भैया को पंडित जी के साथ बैठा दिया। कथा विधिपूर्वक हुई। हवन की तैयारी होने लगी। सभी सामान से हवन स्थान की पूजा की। फिर पंडित जी पहले की तरह मंत्र पढ़ते हुए शीशी का जल निकालकर आम की लकड़ियों पर डालने लगे। किन्तु पहले की तरह आग प्रगट नहीं हुई। इस तरह उन्होंने दो बार और किया, किन्तु अग्निदेव फिर भी प्रगट नहीं हुए। यह देखकर पंडित जी का चेहरा उदास हो गया। वे बोले, "सोनी जी, तुम्हारे घर में कोई ऐसा सदस्य है जिसके कारण अग्निदेव तुम से नाराज़ हैं। अत: उनकी शान्ति के लिए दो दिन का अभिषेक करना पड़ेगा।"

सभी मान गए। गाँव के लोग हमारे प्रति तरह-तरह की बातें करने लगे। मैंने थाली में अंगार लाकर दिए। भैया ने पचास पैसे थाली में रखकर मुझे थाली वापिस दे दी। विधिपूर्वक पूजा सम्पन्न हुई।

रात्रि के समय भैया और पंडित जी का बिस्तर भैया के कमरे में कर दिया था। जब मैं चाय लेकर वहाँ पहुँची तो भैया पंडित जी को डाँट रहे थे। वे पुलिस का भय भी दिखा रहे थे। मेरे को भैया के प्रति बड़ा गुस्सा आया। मैंने जल्दी से पिताजी और मम्मी से कहा। वे दोनों दौड़कर आए।

हम सबने देखा कि पंडित जी भैया के आगे हाथ जोड़ रहे थे। पिता जी ने कहा, "क्या बात है?"

तब भैया ने उस पाखण्डी की कहानी बताई। भैया बोले, "मैं पटेल की कथा से ही पीछा कर रहा हूँ। इसकी शीशी देख ली और उसका जल चुरा लिया। उसकी जगह साबुन का घोल बनाकर रख दिया। क्योंकि वह जल क्रोमिक एनहाइड्राइड के साथ ईथाइल अल्कोहल की क्रिया के फलस्वरूप काफी ताप उत्पन्न करता है। परिणाम स्वरूप ईथाइल अल्कोहल जल उठता है। यही घोल पंडित जी शीशी में भरकर रखे हुए थे। उन्होंने चुराए हुए जल को पास पड़ी हुई टीन पर छिड़का। छिड़कते ही आग प्रकट हो गई। मैं ही नहीं मम्मी-पापा भी आश्चर्य कर रहे थे। पंडित जी खड़े-खड़े सब देख रहे थे। अब पंडित जी मेरे पिताजी के पैरों पर गिर पड़े। पिताजी ने सोचा यदि इसकी कहानी अभी गाँव वालों के लिए बताएँ तो गाँव वाले पंडित जी की अच्छी मरम्मत करेंगे, जिसका शाप लगेगा। इसलिए उन्होंने कहा, "सुबह के पहले ही तुम इधर से चले जाना।"

जब मैं सोकर उठी तो पंडित जी का पता नहीं था। सुबह गाँव वालों को भैया ने रात वाली कहानी बताई। भैया ने वही प्रयोग करके कई बार बताया तो गाँव के लोग भैया की ही नहीं मेरे मम्मी-पापा की भी तारीफ कर रहे थे। मैं तो फूली नहीं समा रही थी।

जनगढ़सिंह श्याम

जब चुनाव हुआ

चंद्रशेखर चौधरी

अभी दिसम्बर में लोकसभा के चुनाव भए थे। मैंने जो देखा वह लिख रहा हूँ।

चुनाव का मौसम था। कई पार्टी में उम्दा जंग लगी थी। एक दिन मैंने देखा कि टाँगे में एक आदमी माइक पर चिल्ला रहो थो, "राजीव गाँधी गद्दी पर, अटलबिहारी चड्ढी पर।"

मैंने सोचा कि जो आदमी काय के मारे चिल्ला रहो है। बाके टाँगे में बहुत सारे झण्डा गड़े थे। मैंने सोचा कि जो झण्डा हवा के मारे लगाए गए हैं। इतने में एक जीप आई। वा में भी एक आदमी चोंगा में कह रहो थो कि, "अटलबिहारी कमल निशान माँग रहा है हिन्दुस्तान।"

मैंने एक आदमी से पूछो कि, "जो आदमी काय के मारे जोर-जोर से चिल्ला रहो है।"

वाने मेंसे (मुझ से) केई (कही) कि, "जो आदमी चुनाव प्रचार कर रहो है।"

मैंने कई कि, जो "जोर-जोर से फालतू में चिल्ला रहो है।" इत्ते में एक जीप और आ गई। वा में छह-सात झण्डा गड़े थे। लोग कह रहे थे, "हटो-हटो नीखरा जी आ रहे हैं।"

मैंने कई कि अबे तक तो मैंने नीखरों दूध को नाम सुनो थो। अब जो नीखरा का बला है। इतने में एक आदमी बहुत सारी माला पहने हाथ जोड़ते आ रहा था। वा के माथे पर पर बहुत सारी गुलाल लगी थी।

मैंने एक आदमी से पूछा, "जो काय के मारे इतनो कर रहो है?"

वाने कई कि, "ये लोकसभा के चुनाव में खड़ो है।"

चंद्रशेखर चौधरी, छठवीं, पिपरिया, मप्र।

जनगढ़सिंह श्याम, मण्डला, मप्र। कहानी व चित्र *चकमक* नवम्बर, 1985 में प्रकाशित।

दूसरे दिन जब मैं सो के उठो तो मैंने देखो, अरे मेरे दईया! जो का हमरे घर की दीवार से मोहल्ला भर में दीवार पर पंजा-पंजा, कमल-कमल लगे थे। मैंने मन-ई-मन कई कि जे तो बहुत गर्रा रहे हैं। हमारी दीवार अब्बई पुतवाई थी। इन्ने आके वा हे पूरी गूद दई। इनकी तो.....! इतने में मेरे मुँह से गारी निकल गई।

दोक (दो-एक) दिन बाद मैंने देखा कि हमरे घर पाँच-छ: आदमी आए हुए हैं। वे कह रहे हैं कि, "तुम्हारे पापा जी को बुलाना।"

मेरे भैया जी (पिताजी) तो पहले से ही टकला हैं। भैया जी बोले, "क्या बोल रहे हैं।"

मैंने कहा, "जे, आदमी वोट की केवे (कहने) के बारे में आए हैं।"

उन्होंने कहा, "अच्छा चुनाव वाले हैं।"

चुनाव वाले हाथ जोड़कर लल्लो-चप्पो करते हुए बोले, 'आप कमल पर ही सील लगइयो।'

मैंने कई कि इनपे कित्ती सील हुएँ।

इसके दो-तीन दिन बाद चुनाव प्रचार बिलकुल बन्द हो गया। मैंने कई कि कल तो जे कित्ती जोर से चिल्ला रहे थे। अब काय नहीं चिल्ला रहे हैं।

फिर मेरे भैया जी वोट डालने जा रहे थे। मैंने कई, "भैया जी कहाँ जा रहे हो!"

भैया जी बोले, "मैं स्कूल जा रहा हूँ वोट डालने।"

जब भैया जी लौटकर आए तो उनके हाथ में सिहायी लगी थी। मैंने कई कि जो धब्बा कहाँ से आ गयो।

फिर चुनाव का माहौल शान्त हो गया।

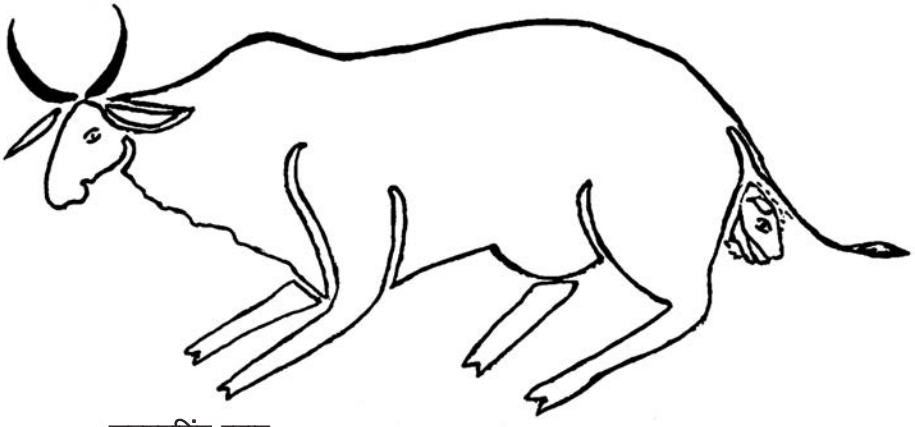

जनगढ़सिंह श्याम

हमारी गाय जनी

अभिलाषा राजौरिया

आज सुबह चार बजे से ही मम्मी का यहाँ से वहाँ आना-जाना और कुछ-कुछ खटर-पटर करना लगा था। मेरी नींद तो खुल सी गई थी, पर मैं आलसी जो ठहरी। रज़ाई में, मुँह छिपाकर सोती रही। पूछा भी नहीं कि, "मम्मी आप इतनी जल्दी क्यों उठ गईं।" डर यह था कि, पूछने पर मुझे ही कुछ काम न लगा दें।

करीब पाँच बजे मेरी छोटी बहिन प्रियंका अपने बाजू में मम्मी को न पाकर रोने लगी। उसका रोना सुनके मम्मी ने उसे समझाते हुए कहा, "प्रियंका बेटी आज अपने यहाँ छोटा-सा 'मन्ना' आया है।"

"सच मम्मी! यह कहते हुए मैं भी बिस्तर से उछल पड़ी।"

मम्मी बोली, "हाँ-हाँ बेटे! प्रियंका को तुम ले चलो। मैं ज़रा गरम पानी कर लूँ।"

अभिलाषा राजौरिया, आठवीं, पिपरिया, मप्र।
जनगढ़सिंह श्याम, कहानी व चित्र *चकमक* नवम्बर, 1985 में प्रकाशित।

हम दोनों बहनें वहाँ गए, जहाँ गाय बँधी थी। बच्चा उसके सामने था। गाय उसे चाट-चाटकर साफ कर रही थी। इतने में मेरा छोटा भाई नीतेश भी उठ गया। अब हम तीनों यह सोचने लगे कि 'मन्ना' को कैसे अपने पास लाएँ। क्योंकि गाय तो हमें मारने दौड़ रही थी।

भैया बोला, "दीदी, अपनी नन्दा तो कभी मारती ही नहीं है। आज यह मारने क्यों दौड़ रही है?"

इतने में पापा जी मुँह-हाथ धोकर आ गए। वह भी तीन-चार बजे से लगे थे। हम लोगों को उत्सुक देखकर बड़े प्रसन्न हुए। बोले, "कहो बच्चो, अपने घर कौन आया है?"

भैया ने पूछा, "पापा आज नन्दा मारने क्यों दौड़ रही है?"

पापा ने कहा, "बेटा, गाय को अपने बच्चे पर स्नेह होता है। सोचती है, ये लोग मेरे बच्चे को मारेंगे तो नहीं? इसीलिए पास नहीं आने देती?"

मैंने पूछा, "क्यों पापा, आज मंगलवार है?"

पापा ने कहा, "हाँ है! क्यों?"

"तब तो पापा हम अपने मन्ने का नाम मंगला ही रखेंगे ना!" मैं बोली।

इस पर पापा बड़े खुश हुए। मम्मी को बताते हुए कहा, "भई बच्चों ने तो बच्छे का नामकरण भी कर लिया। अब इसी खुशी में चाय मिल जाए। चार घण्टे से परेशान हो रहे हैं।"

इतने में मम्मी चाय का प्याला लिए ही आ गई। हम सभी को निर्देश देकर अन्दर भेजा कि जाओ तुम लोग मुँह-हाथ धोकर दूध पियो।

दूध पीकर हम लोग फिर गाय के पास आ गए थे। और कहीं मन ही नहीं लग रहा था। अब मंगला नहा चुका था और आँगन में बैठा था। हम तीनों भाई-बहिन उसे हाथ फेर-फेरकर खिला रहे थे। प्रियंका तो भूसा उठा लाई और हाथों में रखकर उसके मुँह के पास ले गई। कहने लगी, "खा लो मंगला तुम्हें भूख नहीं लगी?"

तब माँ ने समझाया, “बेटा वो अभी दूध ही पीता है। छोटा है ना! इसलिए भूसा नहीं खाता।”

हम लोगों का मन स्कूल जाने का नहीं हो रहा था। पर क्या करें, छ:माही परीक्षाएँ पास ही आ गईं थीं। अत: मम्मी के समझाने पर मन मारकर स्कूल रवाना हुए। उस दिन स्कूल में भी मन नहीं लगा। शाम को स्कूल से आते ही बस्ते टेबिल पर डालकर मंगला के पास पहुँच गए। मंगला अब सुबह वाला मंगला नहीं रह गया था। हाथ रखते ही उठ खड़ा हुआ। फिर तो उसने उछलना शुरू कर दिया। हम लोग रात तक उसी के पीछे पड़े रहे। बार-बार मम्मी-पापा के ज़िद के करने पर सोए। ऐसा था हमारा यह दिन, जिस दिन हमारी नन्दा गाय जनी।

जनगढ़सिंह श्याम

पढ़ाई के लिए लड़ाई

मायाराम सराठे

लगभग दो वर्ष पुरानी बात है। मैं कक्षा आठ का छात्र था। होशंगाबाद जिले के बनखेड़ी ब्लॉक में माल्हनवाड़ा स्कूल में एक शिक्षिका कक्षा आठ की गणित की पुस्तक पढ़ाती थी। वे शिक्षिका अपने दो-तीन वर्ष की उम्र वाले बच्चों के साथ कक्षा में प्रवेश करतीं। अपने छात्रों को न पढ़ाकर वे अधिकांश समय अपने बच्चों को खिलाने में व्यस्त रहतीं। उनको ज़रा भी अहसास नहीं होता कि उन छात्रों का क्या होगा जो कि प्रतिदिन कई किलोमीटर दूर से पढ़ने को पैदल आते हैं। माँ-बाप उनको किस आशा से भेजते हैं, और क्या-क्या मुसीबतें झेलकर पढ़ाते हैं।

अभिलाषा राजौरिया, आठवीं, पिपरिया, मप्र।
जनगढ़सिंह श्याम, कहानी व चित्र *चकमक* नवम्बर, 1985 में प्रकाशित।

छः महीने तक ऐसा ही चलता रहा। मगर जब अर्द्धवार्षिक परीक्षा आई तब सब लड़के घबराए कि हम परीक्षा में सवालों का जवाब कैसे देंगे। हमें तो बहिन जी ने कुछ भी नहीं पढ़ाया। अब क्या करें? अन्त में अर्द्धवार्षिक परीक्षा समाप्त हो गई। दो-तीन दिन बाद पता चला कि सब लड़कों को गणित में शून्य मिला है। हमने सोचा कि क्या हम इस स्थिति में अच्छे भविष्य की कल्पना कर सकेंगे? नहीं।

अब मामला बहुत टेड़ा हुआ। लड़कों ने सोचा कि अब तो वार्षिक परीक्षा के डेढ़ महीने ही बचे हैं। अभी भी यदि हमारी बहिन जी पढ़ाने लगीं तो हम सब पास हो सकते हैं। परन्तु बहिन जी पर कोई असर नहीं पड़ा। परीक्षा का समय बहुत नज़दीक था। सबको परीक्षा ने सोचने के लिए मजबूर किया।

कुछ लड़कों का कहना था कि हम हैडमास्टर से शिकायत करें। कुछ लड़कों ने घर और शिक्षकों के दबाव के कारण कहा कि हम चाहे परीक्षा में पास हों या न हों पर हेडमास्टर के पास नहीं जाएँगे। ये छात्र अधिकतर बड़े घरों, यानी सम्पन्न किसानों के लड़के थे। फिर भी आधे से ज़्यादा लड़कों ने यह फैसला किया कि हम तो हेडमास्टर के पास जाएँगे। अपनी बात कहेंगे। यह निर्णय बहुत हिम्मत से लिया गया।

दूसरे दिन दस-पन्द्रह लड़के हेडमास्टर के पास गए तो हेडमास्टर देखकर घबरा गए। शायद उन्हें समझ में नहीं आया कि इतने लड़के पहली बार इकट्ठे होकर क्यों आ रहे हैं। कुछ दाल में काला ज़रूर है। देखते ही कड़ककर पूछा, "क्यों आए हो?" कुछ साथी घबरा गए। फिर दुबारा प्रश्न किया तो हमारी हिम्मत बँधी।

हमने कहा, "हम आप से एक निवेदन करना चाहते हैं।"

हेडमास्टर ने गुस्से में कहा, "क्या निवेदन करोगे? साले, निवेदन करेंगे? आता-जाता कुछ है नहीं। बोलो क्या बात है?" हम घबराए तो थे ही। कुछ देर चुप रहकर कुछ छात्रों ने जवाब दिया, "सर जो हमारी गणित पढ़ाने वाली बहिन जी हैं, वे पढ़ाती नहीं है।"

हम अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाए थे कि हेडमास्टर आग-बबूला हो गए। बोले, "कैसे नहीं पढ़ाती? पढ़ाती तो हैं, साले पढ़ते तो हैं नहीं, कहते हैं पढ़ाती नहीं हैं। हाँ, अब पढ़ाएँगी। चले जाओ यहाँ से।"

ऐसे करते-करते करीब पन्द्रह दिन बीत गए। परन्तु पढ़ाई में कोई फर्क नहीं आया। अब तो परीक्षा और नजदीक आ गई। मैंने और कक्षा के अन्य साथी महेश, गया, घनश्याम, राकेश आदि करीब अठारह छात्रों ने कबड्डी खेलते समय वहीं बैठकर छोटी-सी एक मीटिंग की। उसमें हमने यही सोचा कि जिन छात्रों के पास पैसा है, वे तो एक वर्ष की जगह दो वर्ष भी पास न हों तो उनका कुछ बिगड़ने वाला नहीं है। पर जिन छात्रों के पास एक वर्ष पढ़ने की तो क्या कल खाने के लिए अनाज नहीं, तन पर पहनने के लिए कपड़े नहीं, रहने के लिए मकान नहीं, उनका क्या हाल होगा? उनके माँ-बाप दिन भर मेहनत करने के बाद भी एक टाइम खाना खाकर ही सो जाते हैं। वे गरीब क्या करेंगे? फेल हो जाएँगे तो सिर्फ यह काम कर सकेंगे कि किसी पटेल के घर के गाय-बैल चराएँगे। कई लड़के किसी के घर मजदूरी करेंगे। इसलिए हम एक काम करें, कि एक बार खुद जाकर बहिन जी से कहें कि आप हमें अपना कोर्स पूरा करवा दें। हो सकता है कि वे हमारी प्रार्थना पर ध्यान दें।

दूसरे दिन हमने यही किया। हमने एक दरखास्त लिखी। उसमें लिखा था "बहिन जी हम सभी छात्रों का आपसे नम्र निवेदन है कि हमें गणित का कोर्स पूरा करवा दें, वरना हम सभी छात्र फेल हो जाएँगे। इसका एक जीता जागता उदाहरण भी तो हमारे सामने है कि अर्द्धवार्षिक परीक्षा में हम सभी छात्रों को शून्य मिला है। आशा है कि आप हमारी प्रार्थना पर अवश्य ध्यान देंगी।" उनसे मिलकर भी हमने यही बात कही। उन्होंने हमें बहुत प्यार से कह दिया कि अच्छा हम पढ़ाएँगे। इसके बाद भी पढ़ाई में कोई अन्तर नहीं आया। अब तो हम परेशान हो गए। हमें कोई और रास्ता नहीं सूझ रहा था। क्या करें? तब मेरे मन में एक बात आई कि क्यों न हम एक दरखास्त बनाकर एडीआईएस (सहायक ज़िला शाला निरीक्षक) साहब को दें। शायद कुछ हो जाए।

दूसरे दिन सुबह होते ही हमने स्कूल के अधिकतर लड़कों से पूछा कि क्या ऐसा हो सकता है? अधिकांश लड़कों के उत्तर मिले, "नहीं, हम अपने गुरु जी की शिकायत नहीं करेंगे।" पूछा कि क्यों? तो कहने लगे, "क्योंकि वे हमारे गुरु जी हैं। वे हमारे पिताजी से कह देंगे तो मार

पड़ेगी।" फिर भी किसी तरह हमने समझाकर बताया कि इसमें नुकसान की बजाए फायदा ही अधिक है।

दूसरे दिन मैं और मेरे तीन-चार साथी सुबह से ही कोशिश कर रहे थे कि आज दो-तीन बजे एक मीटिंग बुलाई जाए। सारी बात खुले आम छठवीं, सातवीं व आठवीं के छात्रों से हो। स्कूल लगा और दो पीरियड बाद सब लड़के स्कूल से भाग निकले। स्कूल से एक किलोमीटर दूर दुधी नदी है। वहाँ अरहर का खेत था। करीब पचास-साठ लड़कों का झुण्ड अरहर के खेत में चला गया। खेत का मालिक चिल्लाया, "हमारे खेत में चोर घुसे।" उसने नजदीक आकर देखा तो उसका बेटा भी हमारे साथ था। उसने अपने बेटे से पूछा, "इतने लड़के खेत में क्यो लाए हो? खेत का सत्यानाश करवा दोगे।"

सब लड़कों ने कहा, "दादा जी हम खेत में कोई नाश नहीं करेंगे। हम तो अपनी बात करके चले जाएँगे।"

किसान ने कहा, "आज तक इतने लड़कों को मैंने ऐसे इकट्ठे बात करते हुए तो क्या खेलते भी नहीं देखा। मैं जानता हूँ तुम क्या बात करोगे? बेर खाओगे और पेड़ उखाड़ोगे।"

सब लड़के एक साथ बोले, "हमारी बहिन जी पढ़ाती नहीं हैं, उस पर बात करेंगे।"

दादा जी ने कहा, "अरे, यह तो अच्छी बात है। ज़रूर करो। हमसे जो मदद चाहो वह मदद करने को हम तैयार हैं।"

इतना कहकर वे चले गए। हम सब बैठ गए। सभी साथी प्रसन्न दिख रहे थे। बात शुरू हुई। बहुत सारे प्रश्न सामने आए। अब तो हमारी परीक्षा का एक महीना ही बचा है, और अभी तक कुछ भी नहीं पढ़ाया गया आदि। अन्त में फैसला लिया गया कि हम एक दरखास्त एडीआईएस को लिखें, जिसमें हम उन्हें अपनी पूरी परिस्थति से परिचित कराएँगे।

अगले दिन दो-तीन लड़कों ने मिलकर एक दरखास्त बनाई और सभी छात्रों से हस्ताक्षर करवाए। सिर्फ एक लड़के और दो लड़कियों ने हस्ताक्षर नहीं किए। अब दरखास्त की रजिस्ट्री करने के लिए पैसा कहाँ

जनगढ़सिंह श्याम

से आए? दस-पन्द्रह लड़कों ने मीटिंग करके यह तय किया कि हम पच्चीस-पच्चीस पैसे चन्दा करके रजिस्ट्री कर देते हैं। पैसे इकट्ठे किए और रजिस्ट्री कर दी। दरखास्त की एक प्रतिलिपि हेडमास्टर को भी देनी थी। सब घबरा रहे थे कि हेडमास्टर को दरखास्त कौन दे। अन्त में मैंने यह करना स्वीकार किया कि प्रार्थना होने के बाद मैं दरखास्त दे दूँगा। प्रार्थना ज्यों ही खत्म हुई मैंने दरखास्त हेडमास्टर को पकड़ा दी।

थोड़ी देर बाद वे घबराए हुए कक्षा में पधारे। बहुत अधिक गुस्से में कड़ककर बोले, "ये किसने दरखास्त लिखी है? खड़े हो जाओ।" सब लड़के खड़े हो गए। हेडमास्टर जी ने एक छड़ी मँगाकर सबकी पिटाई की। हम सब घबराहट से चुपचाप पिटाई सहते रहे। बाद में गाँव के सरपंच व अन्य पंचों ने स्कूल में शाला समिति की मीटिंग बुलाई, जबकि शाला समिति की मीटिंग इससे पहले कभी नहीं हुई थी। छात्रों को मीटिंग में बुलाकर सरपंच व हेडमास्टर ने धमकी दी।

सरपंच महोदय ने विद्यार्थियों से कहा, "तुम्हें थाने में बन्द करवा देंगे। यह काम कानून के खिलाफ हैं।"

हेडमास्टर ने कहा, "हम तुम्हारा नाम काट देंगे। बताओ, कौन ने दरखास्त तैयार करवाई है।"

हेडमास्टर से ऐसी कई प्रकार की धमकियाँ मिलने पर छात्र एकदम बदल गए और बोले कि ये दरखास्त तो मायाराम ने लिखी है। मेरा एक निकट साथी, जिसने इस पूरे मामले में पूरी तरह पहल की थी, वह भी बदल गया। उसने बताया कि मुझसे तो धमकी देकर हस्ताक्षर करवाए गए थे। मुझसे अधिक उम्र वाले छात्रों ने भी यही कहा। इसका कारण यह था कि उन पर सरपंच व हेडमास्टर ने दबाव डाला था। केवल पनागर के घनश्याम चौकसे, परसवाड़ा के नारायण सिंह पटेल, और मेरे गाँव के महेश ठाकुर ने इस दबाव के बावजूद मेरा साथ दिया।

मुझे धमकी दी गई, "तुम्हें थाने में बन्द करवा देंगे। तुम्हारा नाम काट देंगे। तुम नेतागिरी बताते हो? लड़कों को भड़काते हो।"

अगले दिन हेडमास्टर ने कहा, "तुम अपने पिताजी को बुलाकर लाना।"

मैंने कहा, “मैंने दरखास्त लिखी है। मेरे पिताजी ने क्या किया है। मैं अपराधी हूँ। उनको फुर्सत नहीं है। वे नहीं आ सकते।” मुझे नाम काटने वाली धमकी कई बार दी गई। आखिर मैंने कह ही दिया, “नाम काट दो, मगर लड़कों को पढ़ाओ तो।”

आखिर सब लोग समझ गए कि ऐसे नहीं चलेगा। लेकिन शिक्षा विभाग ने कोई जाँच नहीं की। पता नहीं, शायद शिक्षा विभाग को ऐसे मामलों में पहल करने का कानून न हो। क्या शिक्षा विभाग को नहीं चाहिए था कि वह कोई अन्य व्यवस्था करे?

कुछ दिन बाद इस पूरी बात का इतना असर हुआ कि शिक्षिका तो पूरे दिन पढ़ाती ही रहती थीं। अतिरिक्त कक्षा भी पढ़ाती थीं। यहाँ तक भी हुआ कि बहिनजी ने तो रात में भी और इतवार को भी पढ़ाया। इसका परिणाम यह हुआ कि कक्षा आठ के सभी छात्र उत्तीर्ण हो गए। और दो लड़के तो मेरिट में भी आ गए।

हमने पूरे मामले से कुछ सीखा ज़रूर। एक तो हमने दरखास्त में यह लिखा था कि हमें दो ही अध्याय पढ़ाए हैं लेकिन वास्तव में छह अध्याय पढ़ाए गए थे। पर हमारी समझ में दो ही अध्याय आए थे। उस समय हमको ऐसा लगा कि बाकी चार अध्याय उनके पढ़ाने न पढ़ाने के बराबर थे। लेकिन इस पूरी बात को ढंग से न लिख पाने के कारण लोगों ने गलती निकाली, जिसके चलते भी हमारा मामला कमज़ोर पड़ गया। इससे यह सबक सीखा कि इस तरह की किसी भी घटना में तथ्यों को पूरी तरह सामने लाना ज़रूरी है। हमने यह भी सीखा कि सही बात को सामने रखने का क्या मतलब है।

एकलव्य

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है। यह पिछले कई सालों से शिक्षा व जनविज्ञान के क्षेत्र में काम कर रही है। एकलव्य की गतिविधियाँ स्कूल व स्कूल के बाहर दोनों क्षेत्रों में हैं।

एकलव्य का मुख्य उद्देश्य ऐसी शिक्षा का विकास करना है जो बच्चे से व उसके पर्यावरण से जुड़ी हो; जो खेल, गतिविधि व सृजनात्मक पहलुओं पर आधारित हो। अपने काम के दौरान हमने पाया है कि स्कूली प्रयास तभी सार्थक हो सकते हैं, जब बच्चों को स्कूली समय के बाद, स्कूल से बाहर और घर में भी रचनात्मक गतिविधियों के साधन उपलब्ध हों। किताबें और पत्रिकाएँ इन साधनों का एक अहम हिस्सा हैं।

पिछले कुछ सालों में हमने अपने काम का विस्तार प्रकाशन के क्षेत्र में भी किया है। बच्चों की पत्रिका *चकमक* के अलावा *स्रोत* (विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी फीचर्स)) और *संदर्भ* (शैक्षिक पत्रिका) नियमित प्रकाशन हैं। शिक्षा, जनविज्ञान व बच्चों के लिए सृजनात्मक गतिविधियों के अलावा विकास के व्यापक मुद्दों से जुड़ी किताबें, पुस्तिकाएँ, सामग्रियाँ आदि भी एकलव्य ने विकसित व प्रकाशित की हैं।

वर्तमान में एकलव्य मध्य प्रदेश में भोपाल, नर्मदापुरम, पिपरिया, शाहपुर (बैतूल) में स्थित कार्यालयों के माध्यम से कार्यरत है।

इस किताब की सामग्री एवं सज्जा पर आपके सुझावों का स्वागत है। इससे आगामी किताबों को अधिक आकर्षक, रुचिकर एवं उपयोगी बनाने में हमें मदद मिलेगी।

सम्पर्क: **एकलव्य फाउंडेशन** जमनालाल बजाज परिसर, जाटखेड़ी
भोपाल - 462 026 (मप्र)

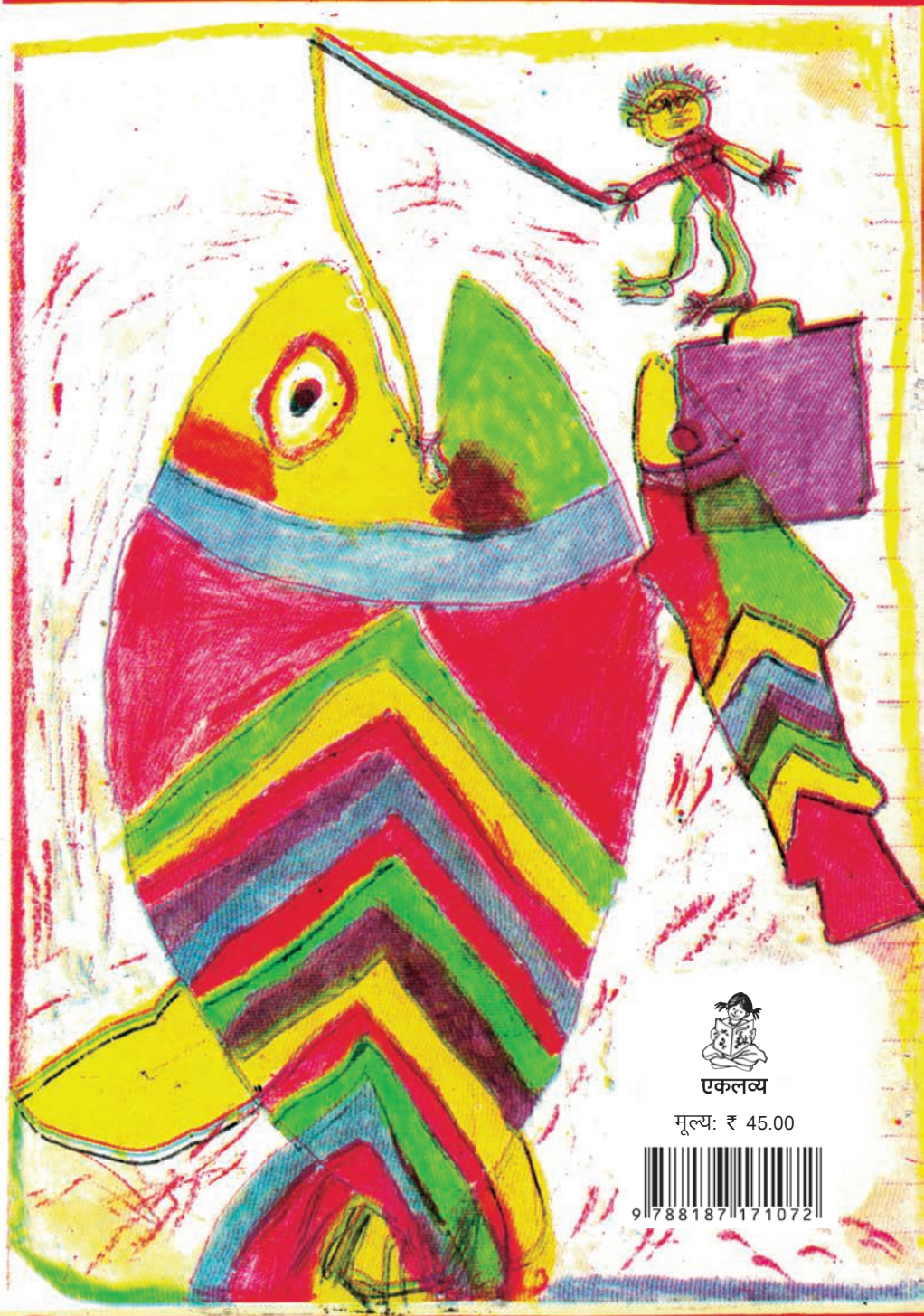

एकलव्य

मूल्य: ₹ 45.00

9 788187 171072